Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन ज्ञान

मासिक

नवम्बर १९६४

मूल्य १/५०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन-ज्ञान (मासिक)
१५६७ हरध्यानसिंह मार्ग,
नई दिल्ली-५

दिसम्बर १९७४

रजिस्टर्ड नं०
डी०-(सी०) २०१
R.N. 10711/65

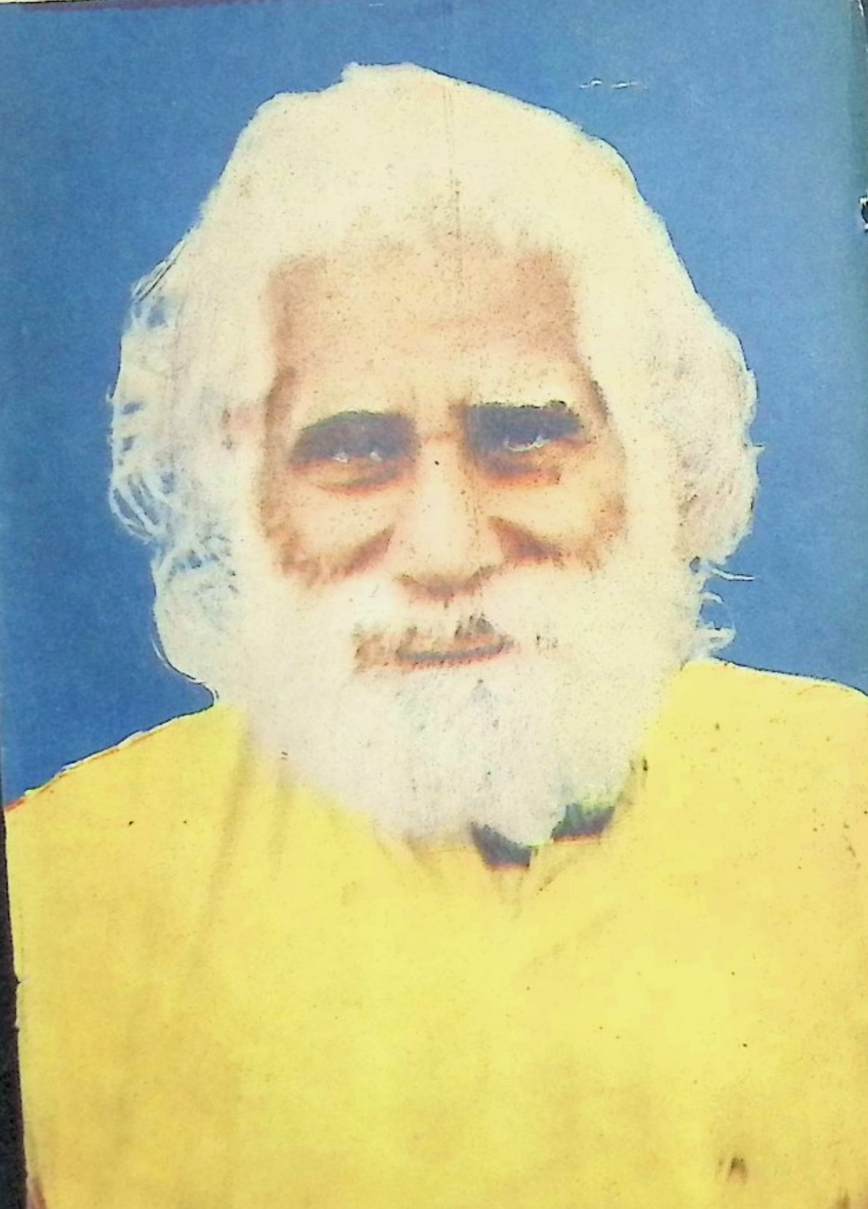

महात्मा टेक चन्द जी प्रभु आश्रित

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

[पंजीकृत ट्रस्ट]

दयानन्द संस्थान
नई दिल्ली का प्रकाशन

जन-ज्ञान

(मासिक)

सम्पादक
—राकेशरानी

दूरभाष : ५६६६३९

—पता
१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग
निकट ३१-नाईवाला
करौल बाग, नई दिल्ली-५

वार्षिक मूल्य १५)
विदेश में—३ पौंड
(हवाई डाक से)
१ पौंड : साधारण
आजीवन—२५१)

वर्ष ७ : अंक ७
मार्गशीर्ष—संवत् २०३१
नवम्बर—१९७४

मेरी पुकार सुनो !

आज दीपमाला है। आप दीपक जलाओगे। घर आंगन सजाओगे, पर ठहरो! पहले मेरी बात सुनो! तब दीप जलाना।

सुनो और देखो, अपने मनको टटोलो,
और पता करो कि क्या वहाँ प्रकाश
है या अन्धकार छाया है ?
कहीं वहां अज्ञान नें,
पाप, झूठ और पाखण्डों ने,
अपना डेरा तो नहीं जमाया है ?
तुम्हारा मन क्या शान्त है ?
क्योंकि जहां प्रकाश है,
वहाँ शान्ति है।
शान्ति के बिना जीवन व्यर्थ है,
क्योंकि जीवन एक सीमा है,
उसकी एक अवधि है,
उस अवधि में कष्ट-क्लेश ताप सहना
अज्ञान की साधना है।
"ज्ञान" सन्तोष देता है,
प्यार बांटता है,
आशा के दीप जलाता है।
ज्ञान क्या तुम्हारे पास है ?
क्या तुमने जीवन के सत्य की,
सत्य की भाषा को, भाषा के अर्थ को
समझा है, या समझने का यत्न
किया है ? यदि हां,
तो दीपमाला मनाओ, दीप जलाओ।
यदि नहीं, तो ठहरो,
पहले मानस का अन्धकार दूर करो।
मन मन्दिर में प्रभ से मिलो।
उससे आनन्द प्राप्त करो।
तब तुम वह सब पा सकोगे जो मिट्टी
के दीप जला कर पाना चाहते हो।

—भारतेन्द्रनाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दीपमाला के पवित्र दिन

मन मन्दिर में प्रकाश भरने के लिए

प्रभु की अमर वाणी "वेद"

अपने परिवार में लाइये

लागत मूल्य : २०१)

रियायती मूल्य : १५ नवम्बर १९७४ तक १५१)

और साथ में

३१) का साहित्य उपहार में

प्राप्त कीजिए

साहित्य—वेदों का यथार्थ स्वरूप १०), बोध रात्रि ५)।
महाभारत ८)। अमृत पथ ५)।
ईश्वर भक्ति १)५०। उपनिषद् त्रयी १)५०।

एक व्यक्ति केवल एक उपहार
प्राप्त कर सकेगा

शीघ्रता करें : आज ही आदेश भेजिए।

मन्त्री—दयानन्द-संस्थान (पंजीकृत ट्रस्ट)
१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मार्गशीर्ष २०३१ | नवम्बर १९७४

अंक में पढ़िये

१.	संपादकीय		५
२.	मैं हृदय मन्दिर से लिख रहा हूँ		७
३.	आर्य बन्धुओं से		१४
४.	मैं या हम	हरेशकुमार सिंह	१६
५.	शिक्षा प्रणाली में गुरुकुलों की भूमिका	ब्रह्मदत्त स्नातक	१७
६.	कम्युनिस्ट पार्टी	सत्यपालसिंह	२०
७.	इतिहास का एक विस्मृत पृष्ठ		२३
८.	आठ पंक्तियां		२७
९.	युवा पीढ़ी का दायित्व		२९
१०.	विदेशों में हिन्दी की स्थिति		३२
११.	काल पुरुष के हाथों में	नलिनीकांत गुप्त	३६
१२.	अमर हुतात्मा प्रतापसिंह	वचनेश	३९
१३.	स्वतन्त्रता का मनोविज्ञान	बा० पूर्णचन्द	४२
१४.	लाला लाजपत राय	भाई महावीर	४४
१५.	पतञ्जलि और फ्रायड का योग विज्ञान		४९
१६.	क्या बच्चों को दण्ड देना जरूरी है ?		५२
१७.	आप ही के पत्र		५५
१८.	श्रद्धाञ्जलि		६१
१९.	महर्षि दयानन्द का महा प्रयाण		६२
२०.	दान महिमा		६८
२१.	हृदय रोग दही : एक गुणकारी अवरोधक		६९
२२.	महाराणा की प्रतिज्ञा (ऐतिहासिक कहानी), विजय		७२
२३.	वहो पछुआ बयार, राबर्ट पेन वारेन		७५
२४.	एक जानवर ऐसा भइया, (हास्य व्यंग)		७६
२५.	तीन मस्तिष्क एक हृदय और एक कसौटी, (बोध कथा)		७८
२६.	चार फल		८३
	अथर्ववेद भाष्य, —पं० हरिशरण जी के भाष्य का नमूना । आपने संपूर्ण वेदभाष्य किया हुआ है यदि कोई उदार दानी महानुभाव कागज का प्रबन्ध कर दें तो यह सारा भाष्य छप सकता है ।		९७

चित्र परिचय

प्रथम पृष्ठ पर "रावण" के संहारक मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का प्रेरक चित्र है। और

अंतिम पृष्ठ पर प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् पं० अयोध्याप्रसाद जी का चित्र है। शक्ति और ज्ञान का संगम ही संसार में आर्य विचार धारा का साम्राज्य स्थापित कर सकता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सार्वभौम आर्यसमाज शताब्दी परिषद् का आवाहन

आर्यसमाजें १२ अप्रैल १९७५ [चैत्र सुदि प्रतिपदा संवत् २०३२] को आर्यसमाज का सौवां जन्म दिन मनाने की तैयारियां जोरों से कर रही है। ११-१२-१३ अप्रैल को प्रत्येक आर्य अपने परिवार में दीपावली मनाने का संकल्प लेकर कार्य कर रहा है। आर्यसमाजें १२ अप्रैल को अपने अपने क्षेत्र में शताब्दी मना रही हैं। इस दिन सभी साहित्य बांटेंगे। पोस्टर लगायेंगे। सार्वजनिक सभाएं करेंगे, और यत्न करेंगे कि सारा ग्राम-नगर दीपमाला मनाए।

१२ अप्रैल आर्यसमाज का सौवां जन्म दिन है। यह दिन सौ वर्ष बाद आया है। सौ वर्ष हमारी स्थापना को हो गए। प्रत्येक आर्य का हृदय इस दिन की तैयारी में उल्लास से भरा है। उत्साह उमड़ रहा है। उमंग भरी है सर्वत्र ......क्योंकि हमारी शताब्दी आ रही है।

हमारे १०० वर्ष गौरव से भरे हैं। हम ने धरती को नया प्रकाश दिया है। हम ने पाखंडों को चुनौती दी है और हम सदा विजयी हुए हैं। हम जीते है, हम जीतेंगे, भविष्य हमारा है इसलिए हम १२ अप्रैल को पूरे बल से आवाज लगायेंगे—

ऋषि दयानन्द की जय, वैदिक धर्म की जय, आर्यसमाज की जय !!

ऋषि दयानन्द के वीर सैनिको !

१२ अप्रैल १९७५ की पुकार सुनो ! इस दिन का महत्व समझो और काम में लग जाओ ! किसी की तरफ मत देखो, स्वयं नेता बनो और आगे बढ़ो ! ऋषि दयानन्दपर श्रद्धा करो और काम करो ! उठो १२ अप्रैल १९७५ का दिन मनाने की तैयारी करो ! सिंह के समान उठो, शान से बढ़ो और अपने-अपने क्षेत्र के प्रत्येक व्यक्ति तक आर्यसमाज का संदेश पहुँचाने का व्रत लो।

हम चाहते हैं कि आपके मानस में नयी शक्ति उभरे, आप जागें और सभी को जगाएं कार्यक्रम बना लो, साधन जुटा लो और आर्यसमाज शताब्दी मनाने की तैयारी करो। अपने नगर में मनाओ, अपने क्षेत्र में मनाओ, प्रांत में मनाओ और काम करो। नारों से बचो और काम करो। योजनाओं से, करोड़ों की अपीलों से सावधान रहकर काम करो।

अपना धन अपने ही क्षेत्र में, वेद प्रचार में व्यय करो। अपने साधन अपने ही क्षेत्र में लगाओ। काम करो....काम, केवल काम।

१२ अप्रैल १९७५ की तैयारी करो।

आर्यसमाज स्थापना दिवस मनाने का व्रत लो।

—कुछ ऐसा करो कि—

सारी धरती मिल कर ऋषि दयानन्द की जय बोल उठे !

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संपादकीय

देश से प्यार है क्या ?

देश में अराजकता का राज्य है। अविश्वास, चोरी, डकैती, लूटमार और बेईमानी के रूप में सर्वत्र हाहाकार है। राम राज्य की स्थापना के स्वप्न देखते हुए स्वतन्त्रता संग्राम में बलिदान दिए गए थे पर स्थापित हो गया है कंस या रावण राज्य !

सत्य तो यह है कि आज राज्य नाम का कोई संगठन इस देश में रहा ही नहीं है। कोई छोटा डाकू है तो कोई बड़ा। धर्म निरपेक्षता के नारे और भोगवादी विचार धारा ने भारत को गारत कर दिया है।

राम से गांधी तक की सारी परम्पराएं मिटा कर दु:शासन-कंस-गजनी-ओडायर की काली रेखाओं से भारत का रंग काला कर दिया गया है। स्वार्थ-गद्दी-पद के व्यामोह ने जनता जनार्दन को दीन-हीन पथ भ्रष्ट बना दिया है।

किस की इज्जत आज सुरक्षित है? किस का मान आज बचा है? कौन है जो सिर उठा कर चल सके? सिवाय लुटेरों के। पाप इतना बढ़ा है कि पुण्य विस्मृत हो गया है। आग ऐसी लगी है कि सभी कुछ जल रहा है। गरीबी, भूख और कंगाली, शोषण, विलासिता और चरित्रहीनता साथ-साथ पनप रहे हैं। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि इस विशाल देश को अपना समझने वाले धरती से विदा हो चुके हैं।

इस जहरीली हवा को अमृत में बदलने का मार्ग है "त्याग" का ! स्वार्थ ने सब कुछ मिटाया है तो त्याग सब कुछ फिर से बना सकता है। मन्त्रीगण यदि मेवा खाने के स्थान पर सेवा का व्रत लें तो आठ दिन में फिर से देश का रेखा चित्र बदला जा सकता है।

जनता की सेवा का व्रत लेकर मंत्री मंत्री नहीं बनता। अधिकारी पद पर इठलाता है सेवा नहीं करता। वह भूल चुका है कि जनता स्वामिनी है और वह सेवक। यही कारण है कि मर्ज बढ़ता जा रहा और देश पिसता जा रहा है।

ज्वालामुखी धधक रहा है। विस्फोट से पहले यदि सभी न संभले तो फिर क्या बचेगा ? सभी कुछ यदि भस्म हो गया तो फिर क्या होगा ? जन-जन के अंतर में असन्तोष का लावा सुलग रहा है। इसे संभालना होगा या मरना होगा।

हमारा आग्रह है कि हम सभी अपने को टटोलें, और जहाँ, जिस पर भी, जिस कार्य में हम लगे हैं, उस में पूरी ईमानदारी से लगें। अपना सुधार ही सब के सुधार का पहला पग है।

अपने को देखिए और सोचिए कि क्या आप डट कर काम करते हैं ? क्या आप दूसरे की पीड़ा को अपनी पीड़ा मानते हैं ? क्या आप के कार्य सब की कल्याण भावना से ओत-प्रोत हैं ? क्या आप अपने कार्य में ईमानदार हैं ? यदि उत्तर हाँ में हों तो ठीक, अन्यथा सुधार अपने से ही आरम्भ कर दीजिए।

"सोने की चिड़िया" था मेरा देश भारत, इसे फिर से सजाना, उठाना और उभारना ही देश भक्ति है। देश से प्यार है तो अपने को बदलिये। अपने मन के अन्धकार को मिटाकर, ज्ञान का, सत्य का दीपक जलाइए। दीपावली पर दीप जलाने से पहले अपने मन को ज्योतिर्मय कीजिए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

माँ की ममता,
प्यार हृदय का,
बुला रहा है!
आज सुला दो
पाप ताप को,
नयी प्रभा से
नयी ज्योति को,
नए गान दो,
नयी शक्ति से
उठो, राष्ट्र को ज्योतित करने।

अपने भाइयों से !

दुर्भाग्य वश अपने को आर्य कहने वाले कुछ व्यक्ति इतने अधिक गिर गए हैं कि उन्हें उचित-अनुचित की कोई चिन्ता नहीं रही।

ऐसे ही कुछ व्यक्ति अपनी ईर्ष्या भावना से दग्ध होकर ऐसे ओछे हथकंडों पर उतर आए हैं जिन की चर्चा भी शोभनीय नहीं। ऐसे सभी प्रहारों से चिन्तित होना हमने कभी नहीं सीखा है।

यही नहीं देश-देशान्तरों में हजारों व्यक्ति ऐसे हैं जो स्नेह से हमें बहन मानते हैं। हजारों ही व्यक्तियों ने माँ कह कर अपनी श्रद्धा अर्पित की है। प्यार का यह बल हमारी शक्ति है। हमें विश्वास है कि एक बहन हजारों भाइयों के स्नेह आँचल की छाया में सुरक्षित है।

प्रभु की राह पर चलना कांटों पर चलने से कम कठिन नहीं है। फिर भी मैं चल रही हूँ और चलूंगी। मेरे असि-व्रत को पूर्ण करना प्रभु का कार्य है या उन भाइयों का जिन्होंने सच्चे हृदय से मुझे बहन माना है।

मुझ पर प्रहार करने वाले सोच लें, मेरा रक्षक भगवान है। मैं किसी का अनिष्ट नहीं चाहती। शत्रु को भी क्षमा करना मुझे आता है। फिर भी जो निम्नतम स्तर पर उतर कर एक बहन की मर्यादा पर प्रहार कर अपने को आर्य कहने का दंभ करते हैं तो फिर तो रावण को भी आर्य ही कहना होगा।

मैं अपने कार्य में लगी हूँ। मेरा कार्य अपना नहीं है। वह ऋषि दयानन्द का कार्य है। ऋषि के उद्देश्य की पूर्ति के लिए मैंने अपना जीवन अर्पित कर दिया है। काम कर रही हूँ, करती रहूँगी। तुम्हें अधिकार है चाहे अपनी श्रद्धा दो, स्नेह दो, चाहे गालियां। पर इतना सोच लो कि नारी का अपमान करने वालों को दंड देने वाले प्रभु के हाथों से कोई बच नहीं सका है।

दयानन्द-संस्थान आर्य जनता की संपत्ति है। हमारा कार्य केवल कर्म करना है। धन-संपत्ति के व्यामोह से ऊपर उठ कर हमने कार्य को ही धन माना है। हमारा कार्य वढ़ेगा, फैलेगा और वह दिन शीघ्र आएगा जब सारी धरती मिल कर हमारे साथ "वैदिक धर्म की जय" बोलेगी।

हम अपना कार्य कर रहे हैं आप इसे देखिए! त्रुटियां बता सकें तो धन्यवाद! सहयोग नहीं दे सकते तो विघ्न डालने का अपराध न ही करें तो अच्छा है।

वन्दना के स्वर !

इच्छा है कि आकाशवाणी से जनवरी से अप्रैल १९७५ तक आर्यसमाज के स्वर गूंजें। इससे सारे संसार में प्रतिदिन आर्यसमाज के सिद्धान्त गूंजेंगे। इस कार्य पर दस हजार रु० के लगभग व्यय होगा। क्या कोई ध्यान देगा।

इच्छा थी कि दीपमाला पर अथर्व-वेद पूर्ण हो जाए किन्तु दुर्भाग्य, हम एक मास पिछड़ गए। प्रभु कृपा रही और आप सभी का थोड़ा थोड़ा भी सह-योग मिला तो ३१ दिसम्बर से पूर्व अथर्ववेद आपके हाथ में होगा।

साधना और शक्ति का बल साथ-साथ चले। झूमती दिशाएं विजय के गीत गाएं। युग बदले और नया विहान् वेद ज्योति लेकर प्रकटे तभी हम वन्दना के स्वर में **गीत गाने** के अधिकारी होंगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मैं हृदय मन्दिर से लिख रहा हूँ ~ भारतेन्द्र

और हम बच गए....

हमें मारने का पूरा षड्यन्त्र था, किन्तु प्रभु की कृपा हुयी और बचाने वाले ने हमारी रक्षा की। लगभग २५-३० हजार रुपया संस्थान का जो बैग में था उठाकर षड्यन्त्रकारियों ने समझा कि हमें और हमारे कार्यों को कुचल देंगे पर वे भूल जाते हैं कि हमें आर्यजनता का प्यार और प्रभु का आशीर्वाद प्राप्त है......हम विश्वास दिलाते हैं कि तूफान-विरोध की आँधी में भी हम बढ़ते जाएंगे, ऋषि दयानन्द की जय गुंजाते रहेंगे, उन्हें अपने षड्यन्त्रों पर विश्वास है और हमें अपने प्रभु पर

घटना इस प्रकार है–

११-१२-१३ अक्टूबर को कानपुर में आर्यसमाज शताब्दी समारोह आशा से अधिक सफल रहा। कानपुर और आसपास की जनता की अपार भीड़ ने महोत्सव को चार चाँद लगा दिये। कानपुर वासियों ने प्रथम बार ज्ञान गंगा में स्नान कर अपने को धन्य समझा। इसी ऐतिहासिक समारोह में दयानन्द संस्थान का भी दर्शनीय साहित्य केन्द्र था। जनता की अपार भीड़ इस केन्द्र पर दिन भर उमड़ती रहती थी। वेद और वैदिक साहित्य के प्रति कानपुर की जनता ने जिस श्रद्धा का परिचय दिया उसकी तो हमें स्वप्न में भी कल्पना तक न थी। चारों ओर धूम थी। २५० से अधिक वेदभाष्य के सदस्य कानपुर महोत्सव में बने। लगभग ४००० किलो साहित्य हम वहाँ ले गए थे, जिसमें से केवल ७०० किलो बचा। शेष जनता ने हाथों हाथ उठा लिया।

दयानन्द संस्थान की अपूर्व लोकप्रियता को देख कर हमारे कुछ मित्रों (?) को कष्ट हो रहा था। जैसे जैसे जन मानस का प्यार संस्थान के प्रति उभर रहा था वैसे वैसे उनके षड्यन्त्रों का ताना बाना भी बुना जा रहा था। अपनी गालियों की असफलता ने उन्हें बौखला दिया था। और अन्तिम दिन...जब समारोह का समापन हो चुका। रात्रि को ग्यारह बजे हम अपने केन्द्र से पांडुनगर श्री पं० लक्ष्मणकुमार जी शास्त्री के घर जहां हम ठहरे थे, जाने को तैयार हुए। दिन भर की बिक्री का धन जिस बैग में था, उसे हमने कार में रखा, हम वहीं बैठे थे तथा श्री ओमप्रकाश इन्जीनियर से कुछ बातें कर रहे थे। तभी पूज्य स्वामी ओमानन्द जी महाराज भी पधारे, एक मिनट उनसे बातें कीं। भाई लक्ष्मणकुमार जी की पत्नी भी गाड़ी में बैठीं थीं, भाई लक्ष्मण जी व उनका पुत्र सुधीन्द्र भी वहीं था। हमारे सारे कार्यकर्त्ता भी थे। आसपास कोई दिखायी नहीं दे रहा था। गाड़ी से उतरकर श्रीमती राकेश जी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

केन्द्र से जो ४-५ गज पर ही था कपड़े लेने गयीं। हम गाड़ी के पास ही खड़े बात कर रहे थे कि दो-तीन मिनट के भीतर ही लौटने पर देखा कि बैग कार में नहीं था। जब शोर मचाया तो पंडाल की बिजली भी गायब कर दी गयी। पलक झपकते ही सब कुछ हो गया। किसने, क्यों, कैसे यह कुकर्म किया, यह तो कहना कठिन है, पर ऐसे समय जबकि परिवार के लोग ही हम वहां थे, बैग गायब कर देना साधारण घटना नहीं है। रात भर पं० विद्याधर जी व श्री ओमप्रकाश जी इन्जीनियर ने दौड़ धूप की, पर कुछ भी परिणाम नहीं निकला। अगले दिन भी बहुत खोज-बीन की, पर जो परिणाम सामने आए उनका न लिखना ही श्रेयस्कर है।

हम नहीं जानते थे कि कोई अपना, द्वेष-ईर्ष्या के वशीभूत होकर, अपने को मिटाने के लिए ऐसी सीमा तक भी जा सकता है। हमारी गाड़ी के नट-बोल्ट और स्टीयरिंग व लाइट सभी ऐसी स्थिति में लाए गए थे कि जिससे यदि वहां बैग उठाने का अवसर घातक को न मिलता तो मार्ग में भयानक एक्सीडेंट होता, और तब क्या होता इसकी कल्पना भी भयावह है।

कुछ व्यक्ति जब गालियां देकर भी हमारा मार्ग बदलने में असमर्थ रहे हैं तो वे हमें मिटाने के लिए सभी निम्न उपायों पर उतर आए प्रतीत हो रहे हैं। हमें आज भी उनसे द्वेष नहीं है। न उन पर क्रोध कर हम अपने को गिराना ही चाहते हैं। हम प्रभु से उन सभी की सद्बुद्धि के लिए प्रार्थना करते हैं जो आज ईर्ष्यावश विवेक-नैतिकता को तिलांजलि दे चुके हैं।

स्वामी ओमानन्द जी महाराज ने हमें धीरज बंधाते हुए कहा था, कि तुमने महात्मा आनन्द स्वामी जी द्वारा प्रदत्त १००) की पूंजी से संस्थान का कार्यारम्भ किया था, प्रभु तुम्हारी परीक्षा ले रहे हैं, घबराओ नहीं, तुम अवश्य सफल होगे। एक सच्चे आर्य संन्यासी की इस सांत्वना ने हमें जो शक्ति दी, उसके लिए हम उनके कृतज्ञ हैं।

भाई उमेशचन्द्र जी स्नातक ने इस कठिन काल में कानपुर में १००) जबर-दस्ती बच्ची को दिए। उनका यह मानस प्यार जीवन में कभी क्या विस्मृत कर सकूंगा? समाचार मिलते ही रा० सा० चौ० प्रतापसिंह जी ने १००१) देकर हमें धीरज दिया।

हम दुगने उत्साह से दिल्ली लौटकर कार्य में लग गए हैं। जो मानसिक पीड़ा हम सभी को इस घटना से हुयी उसे हमने सहा है और हम विश्वास रखते हैं कि भविष्य में वेद, सत्यार्थप्रकाश और ऋषि जीवन के प्रचार का हमारा अभियान और तेजी से चलेगा।

प्रभु हमारे साथ है, सत्य को हमने कभी छोड़ा नहीं, ऋषि दयानन्द के अतिरिक्त और किसी के हमने गीत नहीं गाए, फिर भी कोई हम से क्यों रुष्ट है? क्या अपराध है हमारा? मेरे भाई! बताओ तो सही।

हम आर्यजनता को विश्वास दिलाते हैं कि संस्थान का सेवा कार्य आप सभी के बल से बढ़ रहा है। हमें अटल विश्वास है कि हमारा कोई कार्य रुकेगा नहीं। हम झुकेंगे नहीं। दयानन्द के पावन मन्त्र का प्रसार हम करते रहेंगे, इसके लिए हमें प्राणों की भेंट भी देनी होगी तो देंगे।

अपने जीवन की ही नहीं, अपने परिवार के सभी योग्य सदस्यों की आहुति

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

देकर हमने ऋषि का कार्य किया है और कर रहे हैं। हमारा व्यक्तिगत जीवन समाप्त हो चुका है। हम जीवित हैं ऋषि के लिए। मरेंगे, उसी के लिए, बढ़ते हुए कदमों को रोकने की शक्ति न तूफान में है न शैतान में।

हमारा कार्य जारी है। सत्यार्थप्रकाश का ७ वां संस्करण कल ही प्रेस में दे दिया है। अथर्ववेद अठारह काण्ड छप चुके हैं। विश्वास है कि शीघ्र ही वह छपेगा और तब हम १६ मास बाद भोजन कर सकेंगे।

और उसके बाद भी—और भी तेजी से संसार के हर कोने में आर्यसमाज शताब्दी मनाने के लिए हमारी आवाज गूंजेगी। हमपूरे बल से धरती को पुकारेंगे…गूंजाएंगे चारों ओर वैदिक नाद!

भूले भटके भाइयो!

आपस में लड़ना छोड़ो, चलो लड़ने अज्ञान से, पाखण्ड से, अधर्म से! देव दयानन्द का नाम लेने के स्थान पर उस का काम करो, उस के गीत गाओ और सारी धरती पर वैदिक नाद गुंजाओ।

धन्यवाद प्रभु का कि हम संकट से, षड्यन्त्र से बच गए।…धन्यवाद आर्य जनता का कि उसने हमें अपार प्यार दिया। धन्यवाद उनका भी जो हमारी परीक्षा ले रहे हैं…प्रभु शक्ति दो कि हम अपनी राह पर अडिग रह सकें।

राकेश जी का स्वास्थ्य

हमने इस दुर्घटना को प्रभु की परीक्षा समझ कर सहा है किन्तु इस आघात ने श्रीमती राकेश जी के मन पर भारी चोट पहुँचायी है। उनका स्वास्थ्य उसी दिन से लड़खड़ा गया है। बेहोशी के दौरे भी आ रहे हैं।

संस्थान के कार्यों की सफलता का अधिकांश श्रेय उन्हीं को है। प्रातः ७ बजे से रात्रि ६ बजे तक जमकर काम करना साधारण बात नहीं है। अपने को आर्यसमाज के लिए तिल-तिल कर जलाने में लगी देवी के बल से ही हम आगे बढ़े हैं।

प्रभु उन्हें स्वस्थ करे और शीघ्र वे पूर्ववत् मन से सबल हों, विश्वास है प्रभु कृपा करेंगे।

आर्यसमाज शताब्दी समारोह कानपुर की अपूर्व सफलता

११-१२-१३ अक्टूबर ७४ को कानपुर का ऐतिहासिक शताब्दीसमारोह शताब्दी के इतिहास की स्वर्णिम गाथा है। जिस उत्साह का, उमंग का, शान का परिचय कानपुर ने दिया है उसकी उपमा नहीं।

अलवर, मेरठ, अमृतसर और फिर कानपुर के चार महोत्सवों में कानपुर सर्वश्रेष्ठ था। पौराणिकों के गढ़ में आर्यसमाज महोत्सव की यह अपूर्व सफलता वस्तुतः ऋषि दयानन्द के दिव्य सिद्धान्तों की विजय है।

इस महोत्सव में प्रातः और मध्याह्न के कार्यक्रमों में जो अपार जन समूह

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उमड़ता था उसे देख आश्चर्य होता था। रात्रि के खुले अधिवेशन तो कानपुर के इतिहास में अपनी एक अमिट छाप अंकित कर गए हैं।
भोजन, व्यवस्था, पंडाल, निवास सभी की दृष्टि से कानपुर महोत्सव प्रशंसनीय रहा। इस संपूर्ण सफलता का सेहरा आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के प्रधान पं० प्रकाशवीर शास्त्री की सूझ बूझ और परिश्रम को दिया जा सकता है।

कानपुर के पं० विद्याधर जी, डा० सुखदेव जी, श्री देवेन्द्र स्वरूप जी, पं० लक्ष्मण कुमार जी शास्त्री, श्री देवीदास जी आर्य, श्री ओमप्रकाश जी इन्जीनियर व आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री पं० प्रेमचन्द शर्मा, श्री उमेशचन्द्र जी, स्नातक आदि महानुभावों ने दिन रात श्रम कर सम्मेलन को सफल बनाया। वस्तुतः ये सभी महानुभाव आर्य जनता की ओर से बधायी के पात्र हैं।

कानपुर का यह समारोह अपनी अमिट छाप छोड़ गया। वर्षों तक कानपुर वासी इस समारोह को याद रखेंगे, ऐसा हमारा विश्वास है। सम्मेलन की सफलता आर्यसमाज के महान् सिद्धान्तों की विजय है।

काश कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने ऐसे महान् आयोजन को अपना समझा होता। सार्वदेशिक सभा द्वारा इस ऐतिहासिक गौरवपूर्ण समारोह का बाईकाट हमारी समझ से परे का विषय है। प्रभु इन नेताओं को बुद्धि दे कि वे फूट के इस विष को प्यार के अमृत में बदल सकें।

कानपुर का शताब्दी समारोह सभी को निमन्त्रण दे गया है जागरण का! गति का, १२ अप्रैल १९७५ को सर्वत्र स्थान स्थान पर शताब्दी समारोह मनाने का। गूंजती हुयी वाणी अभी भी गूंज रही है। आर्यो! जागो और सर्वत्र वेद, ऋषि दयानन्द और धर्म की जय-जयकार गुंजाओ।

विजय का डंका आर्यसमाज बजाए।

विनाश से सभी को आर्यसमाज बचाए॥

धर्म की रक्षा

गंभीरता से देखा जाए तो आर्यसमाज का कार्य धर्म के सच्चे स्वरूप का प्रचार, और धर्म के महत्व की स्थापना, व अधर्म की समाप्ति है। आर्यसमाज स्वयं में कोई अलग धर्म नहीं है, अपितु वह धर्म स्थापना का संरक्षक व सूत्रधार है।

भारत के ग्रामों में धर्म के प्रति असीम श्रद्धा है। हमारा विश्वास है कि देश के करोड़ों व्यक्तियों तक यदि हम धर्म का सच्चा स्वरूप पहुँचाने में सफल हो जाएं तो देश की उलझनें बहुत हद तक समाप्त हो जाएं।

आज आवश्यकता है कि प्रचार को नयी दिशा दी जाए, अपनी सारी शक्ति धर्म के स्वरूप और आवश्यकता के प्रचार में लगायी जाए। सबसे प्रमुख बात यह है कि हम संसार को बताएं कि धर्म केवल "धर्म" है, उसके आगे पीछे कोई विशेषण नहीं लगाया जाता। और यदि लगेगा तो वह धर्म, धर्म नहीं रह जाएगा।

धर्म की रक्षा करो, तुम्हारी रक्षा स्वयं धर्म कर लेगा। ब्राह्मण का कार्य धर्म की रक्षा था, ब्राह्मण तभी तक ब्राह्मण है जब तक वह धर्म को बताता है,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

फैलाता है। आज आर्यसमाज पर यह दायित्व है कि वह धर्म के सच्चे रूप को सर्वत्र प्रतिष्ठित करे। अधर्म और धर्म में भेद बता कर धर्म को प्रखर करे। धर्म जागे, धर्म फैले, धर्म छाए सभी के मानस पर तो फिर अन्धकार क्यों रहेगा ?

सत्यार्थप्रकाश फिर प्रेस में

सत्यार्थप्रकाश प्रकाशन निधि में दान दीजिए

सभी को यह जानकर हर्ष होगा कि सत्यार्थप्रकाश का प्रचार संस्थान द्वारा तीव्रता से हो रहा है। १६७४ में ही हम दो वार सत्यार्थप्रकाश छाप चुके हैं। और पिछले दो वर्षों में ६ बार। अब ७वां संस्करण प्रेस में दे दिया है जो दीपमाला से पूर्व प्रकाशित हो जाएगा।

हम चाहते हैं कि आर्यसमाजें अपनी सारी शक्ति सत्यार्थप्रकाश और ऋषि जीवन के प्रचार में लगाएं। सत्यार्थप्रकाश ही वह शक्ति है जिस के द्वारा हम अज्ञान पर विजय पा सकते हैं।

हमारी इच्छा थी कि हम सत्यार्थप्रकाश कम से कम मूल्य में प्रकाशित करें। किन्तु दुर्भाग्यवश कागज की मंहगायी ने हमारी इच्छा पूरी न होने दी। फिर भी यदि उदार दानी महानुभाव इस ओर ध्यान दें, तो सत्यार्थप्रकाश सस्ता किया जा सकता है।

"सत्यार्थप्रकाश प्रकाशन निधि" में यदि आप का दान उदारता पूर्वक आए। १००१) देने वालों का नाम सत्यार्थप्रकाश में छापा जा सकेगा। और इस दान से सत्यार्थप्रकाश लागत से कम मूल्य पर दिया जाएगा।

ऋषि दयानन्द के भक्त सोचें कि वे पावन ग्रन्थ के प्रचार के लिए क्या कर सकते हैं—

फूट-लूट और झूठ

देश की दुर्दशा के तीन रोग कारण हैं। फूट अर्थात् आपसी विवाद। इस फूट ने देश को परतंत्र, निर्धन किया। विदेशी आक्रांताओं की सफलता का कारण थी यह फूट....फूट ही ऋषि दयानन्द के स्वप्नों की पूर्ति में बाधा बनी खड़ी है।

और फूट की प्रेरणा है "लूट"। लूट में बाधा न पड़े इसलिए फूट उभरती है। स्वार्थ पूर्ति में व्यवधान आते हैं। तो विवाद खड़े होते हैं। इसलिए लूट ने फूट को जन्म दिया है और लूट की भावना को प्रेरणा दी है झूठ ने। झूठी शान ने, दिखावे की भावना ने लूट को पनपाया है। यह झूठ ही तो है जिसने जीवन की सारी परिभाषाएं बदल दी हैं। झूठ ने अज्ञान को, अज्ञान के दर्शन को, भोगवाद को अंकुरित किया है।

फूट-लूट और झूठ के विरुद्ध प्रबल अभियान चलाने की आज आवश्यकता है। जीवन के हर मोड़ पर इन तीनों मानवता के शत्रुओं ने सभी कुछ खोखला कर दिया है। काश कि सभी पूरी शक्ति से इन के विरुद्ध संघर्ष करने हेतु युद्ध घोषणा करते ॥

—भारतेन्द्रनाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आत्म निवेदन

हमने मार्च १९७५ के अंक में लिखा था कि कुछ व्यक्ति हमें प्रत्येक दृष्टि से समाप्त करनेका षड्यन्त्र कर रहे हैं। कोइ वार ऐसा नहीं जो ईर्ष्या वश हम पर न किया जा रहा हो।

पर हम अपने को प्रभु की गोद में सौंप कर निश्चिन्त हैं। जिस विध राखे "ओ३म्" उसी में हंसकर रहना, हमारा मूल मन्त्र है।

हमें किसी पर भी न क्रोध है न रोष, प्रभु के न्याय पर सभी कुछ छोड़ दिया है। किसी के दवाब, स्वार्थ या पद के लालच में नहीं, कर्त्तव्य समझ हम जो कर सकते हैं, कर रहे हैं।

डरना झुकना या मार्ग बदलना हमने सीखा नहीं। हमारा मन जिस बात की प्रेरणा करता है वह करते हैं और करेंगे। बाधाएं जितनी भी आएंगी, सहेंगे। सर्वस्व भले ही चला जाए पर हमारा मस्तक असत्य के सम्मुख कभी नहीं झुकेगा।

कोई हमारे कार्य में, व्यवहार में त्रुटि बताए, स्वागत ! पर जो स्वयं असत्य की प्राचीर पर खड़े हैं वे किसी के सत्य पर विश्वास कर भी कैसे सकते हैं।

अपने प्रभु से हम तो यही मांगते हैं कि सत्य कभी छूटे नहीं, प्रभु कभी रूठें नहीं, हम बढ़ते जाएं, जीवन की अंतिम सांस तक ऋषि दयानन्द का काम करने के लिए·······

वेदभाष्य शीघ्र पूर्ण होगा

हम जनता को विश्वास दिलाते हैं कि ३१ दिसम्बर १९७४ से पहले ही अथववेद का पूर्ण भाष्य आप के हाथों में होगा। यदि न हुआ तो हम ३१ दिसम्बर की रात के बारह बजे के बाद केवल जल ही ग्रहण करेंगे।

हमें अब केवल प्रभु का ही भरोसा है। देखना है कि प्रभु का आशीर्वाद अधिक शक्ति रखता है यह लौकिक विरोधी शक्तियां। हम अब अपने प्रभु से ही मांगेंगे, वही हमारे लिए साधन जुटाएगा।

१३ की रात को ११ बजे तक हम सोच रहे थे, कार्य पूर्ण हुआ और इस वर्ष दीपावली पर भोजन करेंगे कि एक मिनट के भीतर सब कुछ लुट गया।

हमने कैसे सहा इस वज्र प्रहार को यह हम ही जानते हैं। प्रभु कृपा से ही यह कठिन आपदा सही है और···इतना होने पर भी हमारा मानस स्थिर है। हम पूर्ववत् काम में लगे हैं, लगे रहेंगे। वेद भाष्य शीघ्र छपेगा, हम रहें न रहें पर हमारा वचन पूर्ण होगा। सब निश्चिन्त रहें।

वेदभाष्य घर-घर में पहुँचाइये

हमने नवीन योजनानुसार घर-घर में वेदभाष्य पहुँचाने के लिए दीपमाला पर ३१) का वैदिक साहित्य उपहार में देने की घोषणा की है। इस घोषणा से जहां परिवारों में वैदिक साहित्य पहुँचेगा वहां वेद भाष्य भी घर घर में अमृत बरसाएगा।

केवल १५१) भिजवाएं, हम धन प्राप्त करते ही ऋग्वेद ६ मंडल, यजुर्वेद, सामवेद संपूर्ण व ३१) का साहित्य डाक व्यय की वी० पी० पी० से भेज देंगे। जो सज्जन कवर भी मंगाना चाहें वे स्पष्ट लिखें। दोनों कवर का मूल्य ७) होगा।

"वेद" पर आपकी श्रद्धा को हम जगा रहे हैं। सोचिए, जागिए और कर्त्तव्य की पुकार सुनें।

—भारतेन्द्रनाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अधिक से अधिक मंगाएं : बांटें

१९७५ का बड़ा आकर्षक
शतान्दी कलैन्डर
[२२×३२ इन्च साइज में]
मूल्य ७५ पंसे :o: ६५) सैं०

१९७५ की आकर्षक डायरी
सजिल्द मूल्य ४)—३००) सैंकड़ा अजिल्द मूल्य ३)—२२५) सैं०

ऋषि दयानन्द का जीवन चरित्र
नया : सुन्दर : आकर्षक—१२०) सैंकड़ा

सत्यार्थ-प्रकाश ७ वां संस्करण
प्रचार संस्करण ४००) सैंकड़ा । राज संस्करण ५००) सैं० । उपहार संस्करण—६००) सैं०

आदर्श सुधारक दयानन्द
श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय लिखित एक महान् प्रेरक ग्रंथ
मूल्य ६० पैसे :—: ४५) सैं०

ऋषि दयानन्द (बड़ा जीवन चरित्र सजिल्द)
मूल्य—६) ४५०) सैंकड़ा

आर्यसमाज के सौ वर्ष = १५) सैंकड़ा

दयानन्द के वीर सैनिको उठो और साहित्य के अस्त्र से विजय प्राप्त करो !

दयानन्द - संस्थान नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आदरणीय आर्य बन्धु !

'भारत में एक अग्नि प्रज्वलित होती देख रहा हूँ—जो संसार भर में विस्तृत होगी और प्रत्येक को उत्थान का मार्ग दिखायेगी ।' अमेरिकन मनीषी के यह शब्द कानों में गूंज रहे हैं, किन्तु हम जो बहरे हो गये हैं, साथ ही मदांध भी !

शताब्दी आ रही है और भारत का प्रसिद्ध विचारक दर्द भरे हृदय से कह रहा है—'जन्म शताब्दी के दिन नमाज-जनाजा पढ़ी जाएगी और जनाजे का जलूस-शोभा यात्रा- बड़ी शान से निकलेगा ।' यह सुनिश्चित सत्य है । 'संध्या-हवन-प्लेटफार्म वागीश-कम्पनी प्राईवेट लिमिटेड' का दिवाला सरे आम निकलेगा, निःसंदेह !

आकाश गुंजाने वाले नारेबाज, कुतर्क शिरोमणि, चंदा संग्राहक कम्पनी अन लिमिटेड' अपनी शाख कब तक बनाये रखेगी ? भगवान दयानन्द ने जिन बुराईयों को हटाने के लिए आर्यसमाज की स्थापना की थी, आज उनसे दूनी खराबियाँ हमारे अन्दर आ गई हैं । हमारा नैतिक पतन सीमा पार कर गया है । आज हमारा धर्म-कर्त्तव्य-उद्देश्य और आदर्श ईर्षा-द्वेष, पद लोलुपता, प्रांतीयता, जातीयता, मुकद्दमेबाजी और चन्दा उगाहना मात्र रह गया है । जिनके निर्वाचनों में अदालत से स्टे आर्डर लाये जाएं, मार पीट ही नहीं कत्ल तक हो जाएं । जो यम-नियमों के पालन बिना 'योगी' बन रहे हों । जिनमें पारिवारिक ऐक्य नहीं, मन्तव्यों और कर्त्तव्यों में साम्य नहीं, जो धर्म का मात्र बोझ उठाये फिरते हैं, उनका "कृण्वन्तो विश्वं आर्यं" का स्वप्न कभी साकार होगा ???

नई सन्तान के लिए हमारे यहाँ कौनसा आकर्षण है ? वह निरा दंभ और मूर्खतापूर्ण समझती है-हमारे इस चरित्र को । हम पर संकट बाहर से नहीं भीतर से है और १६। आने नहीं पूरे २० आने संकट है । हम कबूतर की तरह आखें मीच कर अपने को और दूसरों को अब और अधिक धोखा नहीं दे सकते । संसार में शायद ही कोई ऐसी संस्था होगी जिसका पतन इतनी शीघ्र-दूसरी पीढ़ी में ही-हो गया हो । प्रभु दयानन्द की पवित्र आत्मा क्या कहती होगी ? .

महर्षि दयानन्द ने जो अग्नि जलाई थी-वह बुझ रही है । राख की मोटी मोटी पर्तें इस पर जम गई हैं । जरूरत है उसे पुनः प्रचण्ड किया जाये । भूचाल लाया जाये । स्तब्द्ध जल में क्षोभ पैदा हो । आत्म निरीक्षण हो-सिंहावलोकन किया जाय । इन सब का एक ही साधन-उपाय है । धधकता साहित्य लिखा जाय-प्रकाशित हो और प्रसारित किया जाय । तेज नश्तर से, निःसंकोच, निर्भयता से इस नासूर को फाड़ दिया जाय । आज जनता यह सुनने को बिल्कुल तैयार नहीं है कि हम क्या कहते हैं-वह टार्च लेकर यह देखना चाहती है कि हम क्या करते हैं । कम से कम अगली सन्तान हमारे नाम पर लाहोल पढ़ने को तो उद्यत न हो । हमें घृणित और मात्र वाक्य शूर, अकर्मण्य तथा कृतघ्न तो न समझे । हम 'पागल' हैं-अच्छे हैं, हमें इस पागलपन पर नाज है-गर्व है । हम भी अपनी बिरादरी बढ़ाना चाहते हैं ।

पता:—

२०३-बी, गांवठन,
विलेपारले (पश्चिम),
बम्बई-५६

चिरपरिचित
विनयावनत—
द्वारकाप्रसाद सेवक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दीपावली के दिन श्रद्धा से वेद-भाष्य प्रकाशन यज्ञ में अपनी आहुति अवश्य भेजें।

आर्यसमाज स्थापना शताब्दी

रचनात्मक रूप से मनाने के लिए

अपने क्षेत्र में अधिक से अधिक

प्रचार-पोस्टर लगवाइए

१.	सत्यार्थप्रकाश के सम्बन्ध में—	पत्ती लगा ५०) सैं०
२.	आर्यसमाज के दस नियमों का तिरंगा—	,, ,, ५०) सैं०
३.	स्वामीजी के चित्र वाला (चार रंगों में)	,, ,, ५०) सैं०
४.	गायत्री मन्त्र अर्थ सहित (३ रंगों में) पत्ती लगा आर्ट पेपर पर ५०) सैं० १५×२० साइज में	
५.	स्वामीजी व १० नेताओं का चित्र	पत्ती लगा ५०) सैं० बढ़िया १००) सैं०
६.	स्वामीजी का असली चित्र	,, ,, ३०) सैं०
७.	स्वामीजी के दो चित्र छोटे	१००) सैं०
८.	१९७५ का कलैण्डर	६५) सैं०

पोस्टर बड़े साइज में अत्यन्त बढ़िया कागज पर छापे गये हैं। व्यय बहुत पड़ता है, पर प्रचार के लिए हम लागत से भी कम मूल्य पर दे रहे हैं।

आर्यसमाजों का नाम लिखने के लिए भी स्थान छोड़ा गया है।

१. कृपया आदेश के साथ चौथाई धन भेजें
२. अपने रेलवे स्टेशन का नाम लिखें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मैं या 'हम'

एक सज्जन ने हमसे पूछा कि आप कहाँ के रहने वाले हैं ? हमने कहा, हम वाराणसी के रहने वाले हैं। उन्होंने कहा—'हम' वाराणसी के रहने वाले हैं या 'मैं' वाराणसी का रहने वाला हूँ। पुनः हमने अपने कहे वाक्य को दुहराया। उन्होंने कहा यह अशुद्ध है। शायद उनका यह सोचना इस लिए हो कि 'हम' शब्द का प्रयोग केवल बहुवचन के लिए होता है। और हम बोलने वाले एक वचन थे। चाहे उनका दृष्टिकोण जो भी हो हमें उनकी बातों पर ज्यादा बहस नहीं करनी थी इसलिए हमने कहा आप जो समझ रहे हैं वही ठीक है।

आज संपूर्ण दुनिया में मैं चिल्ला रही है। जैसे हम शब्द का उसे ज्ञान ही नहीं। आप किसी से भी पूछें कि आप क्या करते हैं ? कहाँ रहते हैं ? उत्तर मिलेगा—"मैं डाक्टर हूँ, वकील हूँ, प्रोफेसर हूँ, मैं अमुक स्थान पर रहता हूँ इत्यादि। वे अपने को एक से अधिक मानते ही नहीं। और अध्यात्म कहता है कि मैं नहीं 'हम' अर्थात् एक से अधिक हैं। आज दुनियां की सारी दुःखों की जड़ 'मैं' बना हुआ है। बस जहाँ देखिए मैं, मैं, मैं। किन्तु व्यक्ति को मैं नहीं 'हम' समझना होगा अर्थात् एक से अधिक। एक आत्मा और दूसरा शरीर। जब तक हम इन दोनों को अलग-अलग नहीं समझेंगे तब तक हमारा कल्याण होने वाला नहीं है। इन दोनों को अलग न समझने के कारण आज मनुष्य की ठीक वही दुर्गति हो रही है जैसे गुड़ गोबर की। दोनों अलग-अलग बड़े काम की एवं पवित्र वस्तुयें है। गुड़गोबर अर्थात् गुड़ और 'गोबर'। सभी जानते हैं कि गुड़ मनुष्य के लिए कितना आवश्यक है और 'गोबर' जिसके लेपन करने मात्र से घर पवित्र होता है और अनेक रोगों में औषधि का काम करता है। किन्तु अलग-अलग व्यवहृत्त करने पर। यदि इन दोनों को एक साथ मिला दिया जाय तो न वह खाने के लायक रहेगा और न लीपने के लायक। अगर उस (गुड़गोबर से) लेपन किया जाएगा तो शुद्धता आने के बजाय मक्खियाँ लगेंगी और सड़न होगी। अर्थात् गुड़ गोबर किसी काम का नहीं होगा।

किन्तु यदि इन दोनों वस्तुओं को अलग-अलग उपयोग में लाया जाय तो बड़े काम के हैं। ठीक यही स्थिति आज मनुष्य की है। आज मनुष्य शरीर और आत्मा की भिन्नता को समझने केबजाय अपनेआपको 'मैं' बना लिया है। इन दोनों का मिला जुला स्वरूप हमेशा उसके सामने होता है। अगर हम गम्भीरता पूर्वक सोचें तो हमें पता चलेगा कि अधिकांशतः दुःख इसीएि होते हैं कि शरीर को ही सभी कुछ समझ बैठे हैं। और जब शरीर अशक्त होने लगता है तब आत्मा को सब कुछ समझने लगते हैं। किन्तु दोनों का अपना अलग-अलग महत्व है। इन दोनों के ही कारण मनुष्य का अस्तित्व है।

साधन और साध्य की भिन्नता ऐसे नहीं अध्यात्म, स्वाध्याय और आत्मचिंतन के द्वारा होगी। दुनियां की सभी भौतिक वस्तुयें केवल शरीर के लिए हैं। आज समस्त संसार इसी शरीर के साधन (भौतिक वस्तुयें) जुटाने में लगा है और आत्मा से विमुख हो गया है। उसे बिल्कुल भुला दिया है। परिणामतः नाना प्रकार के कष्ट अनुभव होते हैं। ईश्वर ने हमें मनुष्य जीवन के रूप में आत्मा के साथ शरीर इसलिए दिया था कि हम शरीर के माध्यम से आत्मा का विकास करते हुए ईश्वर को जानें और उन तक पहुँच सके।

—हरेश कुमार सिंह, वाराणसी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—ब्रह्मदत्त स्नातक

शिक्षा प्रणाली में गुरुकुलों की भूमिका

उन्नीसवीं शताब्दी में ऋषि दयानन्द ने तत्कालीन विविध धार्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक पहलुओं पर चिन्तन किया। उन्होंने १८५७ के भारतीय विद्रोह की ज्वालाएं अंकुरित एवं प्रचण्ड होने के बाद शान्त और दमन की स्थिति में भी देखी थीं। इन दिनों वे निर्वीर्य, निश्चेष्ट या निष्क्रिय होकर नहीं बैठे रहे थे, अपितु एक विचक्षण नेता की तरह, अथवा एक अनुसंधान कर्ता या विचारक की भांति मौलिक रूप से राजनैतिक पृष्ठभूमि पर उन्होंने गहरा विचार किया। सीधे ही स्वयं हाथ में खांडा लेकर अथवा अपने शिष्य-भक्तों की एक प्रबल सेना खड़ी करने की बजाय वे समाज के निर्माण में जुट पड़े। धार्मिक मूढ़ाग्रह उनके मार्ग में सबसे बड़ी बाधा थी, सो उस पर उन्होंने खंडन द्वारा भरपूर वार किया। परन्तु पुरानी विनाशकारी मान्यताओं का ध्वंस करने के बाद ऋषि ने उसके मलबे को हटाकर निर्माण के युग का भी श्रीगणेश किया। आर्यसमाज की स्थापना इसी दिशा में किया गया उनका महान् प्रयत्न था, जिसके द्वारा जनमानस को एक नई प्रेरणा देना ऋषि को अभीष्ट था।

शिक्षा को नई दिशा

उन्नीसवीं शताब्दी में अंग्रेजों के आने से पूर्व एवं उसके बाद भी बहुत समय तक देश में संस्कृत पाठशालाओं एवं मदरसों के जरिए लोग शिक्षा पाते थे। प्रादेशिक भाषाओं के विधिवत् अध्ययन के लिये कोई व्यवस्था नहीं थी। अरबी भाषा में लिखी फारसी अथवा कहीं-कहीं देशी रजवाड़ों में नागरी में लिखी फारसी या हिन्दी का प्रयोग राजकार्य में होता था। अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, युद्धनीति आदि विषयों को पढ़ाने के लिए कोई संगठित व्यवस्था नहीं थी, व्यक्तिगत प्रयत्नों को कहीं-कहीं राजाश्रय मिल जाता था। इसके अतिरिक्त देशभर में व्यापारिक कामों के लिए अलग से महाजनी भाषा चलती थी। ईस्ट इंडियन कम्पनी के अंग्रेज संचालक मुख्यतः व्यापारी थे, और अपने इसी उद्देश्य को साधने के लिए राजनैतिक जाल उन्होंने फैलाना शुरू कर दिया था। शासकों एवं शासितों की भाषा की भिन्नता के कारण अंग्रेज व्यापारियों को कठिनाई का अनुभव होता था। उधर ईसाई मिशनरी देश के सांस्कृतिक धरातल की नींव को गिराकर एक ऐसे समाज के निर्माण में जुटे हुए थे; जिससे भारतवासी वर्तमान अमेरिका, आस्ट्रेलिया अथवा अफ्रीका के निवासियों की भांति पाश्चात्य संस्कृति के दास बन जायें। राजनैतिक स्वाधीनता का अर्थ उस दशा में भारतवासियों के लिये आत्मविहीन देह की अधिप्राप्ति थी।

ऋषि दयानन्द ने अपनी पैनी दृष्टि से वह सब भांप लिया और शिक्षा के सम्बन्ध में अपने विचार अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश में निम्न शब्दों में रखे—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"......आठ वर्षों के हों तभी लड़कों को लड़कों की और लड़कियों को लड़कियों की पाठशाला में भेज देवें। जो अध्यापक पुरुष वा स्त्री दुष्टाचारी हों, उनसे शिक्षा न दिलावें, किन्तु जो पूर्ण विद्यायुक्त धार्मिक हों वे ही पढ़ाने और शिक्षा देने योग्य हैं। द्विज अपने घर में लड़कों का यज्ञोपवीत और कन्याओं का यथायोग्य संस्कार करके यथोक्त आचार्यकुल अर्थात् अपनी-अपनी पाठशाला में भेज दें......।

(तृतीय समुल्लास)

महर्षि के अन्य ग्रन्थों में भी शिक्षा के प्रकरण में निम्न सिद्धान्त संक्षेप में प्रतिपादित किये गये हैं......

१—लड़कों और लड़कियों के शिक्षणालय पृथक्-पृथक् हों। इनका नाम ऋषि ने आचार्यकुल अथवा गुरुकुल अपने ग्रन्थों में दिया है।

२—आठ वर्ष से अधिक की आयु के बालक को गुरुकुल में अवश्य भेजना चाहिए। राजनियम के अनुसार ऐसा न करने वालों के लिये दण्ड का विधान हो।

३—विवाह की आयु से पूर्व तक विद्यार्थी घर में न रहकर गुरुकुल में ही निवास करे। ब्रह्मचर्य का पालन करे। गुरु उसका निर्माण इसी आधार पर करे।

४—गुरुकुलों में सबको समान स्तर दिया जाय। धनी-निर्धन, ऊँच-नीच का कोई भेदभाव न हो।

५—गुरु और शिष्य का पिता-पुत्र का सम्बन्ध रहे अपितु गुरु ही माता-का सा स्नेह भी देवे। केवल शिक्षा या उपाधि प्राप्त व्यक्ति ही अध्यापक न रखे जायें, अपितु उनके आचरण शुद्ध एवं आदर्श हों।

६—शिक्षणालय नगर से दूर एकान्त में हों एवं कन्याओं तथा बालकों की संस्थाएं दूरी पर होवें।

७—वेद वेदांगों की शिक्षा के साथ अन्य प्रकार की उपयुक्त शिक्षा, जैसे राजशास्त्र, भूगोल, चिकित्सा, शिल्प, गणित आदि भी अवश्य दी जानी चाहिये।

८—विचारों की शुद्धता एवं चरित्र निर्माण की दृष्टि से गृहस्थोपयोगी शृंगार की भावना से वे विद्यार्थियों को सर्वथा दूर रखना चाहते थे।

क्रान्तिकारी परिवर्तन

शिक्षा की दृष्टि से महर्षि के उपर्युक्त विचार न केवल धार्मिक एवं राष्ट्रीय दृष्टि से परमोपयोगी थे और हैं, अपितु इससे इस प्रणाली का क्रान्तिकारी स्वरूप भी स्पष्ट हो जाता है। मैकाले और उसके समकालीन अंग्रेज शासक तथा उनके पिछलग्गू भारतीयों ने जिस निस्तेज एवं गुलाम बनाने वाली शिक्षा प्रणाली को देश में प्रचलित किया, यह उसकी सीधी काट थी। यह एक महान् प्रयोग था जिसकी उपादेयता आज सर्वत्र मुक्तकंठ से स्वीकारी जा रही है।

गुरुकुलों का स्वरूप समय की गति को ध्यान में रखकर थोड़ा-बहुत बदला जा सकता है। परन्तु उसके निर्देशक सिद्धान्त बहुत अंश में प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्रियों ने भी स्वीकार किए हैं। तैत्तिरीय उपनिषद् नवम अनुवाक में स्पष्ट है कि पढ़ने और पढ़ाने के अतिरिक्त कुछ अन्य मानवीय गुण हैं जिनका समावेश निश्चित ही शिक्षा में होना चाहिये। छान्दोग्य उपनिषद् में नारद ने जिस अपराविद्या का जिक्र

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

किया है वह संसार की सारी विद्याओं के अन्तर्गत आ जाती है। अतः परा व अपरा विद्या का समावेश महर्षि की अपनी कल्पना नहीं थी, अपितु उसमें शिक्षा के मनोविज्ञान एवं अन्य आधारभूत सिद्धान्तों का युक्तियुक्त समावेश था। इस शिक्षा-प्रणाली के मूलभूत उद्देश्यों को संक्षेप में इस प्रकार गिना जा सकता है......

गुरु शिष्य का आध्यात्मिक संबंध

१—शास्त्रों में इसीलिये कल्पना के माध्यम से समझाया गया है कि गर्भस्थ शिशु का जिस प्रकार माता निर्माण करती है, गुरु भी उसी प्रकार उसका निर्माण करता है। आज हम जिस प्रकार के उच्च शिक्षित अध्यापक अपने गुरुकुलों में नियुक्त करते हैं, उनमें विद्यार्थी के निर्माण की अन्तर्दृष्टि भी होनी परमावश्यक है। केवल अक्षराभ्यास ही जीवन को नई दिशा देने में असमर्थ है।

२—सत्य, दम, शम, तपादि द्वारा दृढ़ चरित्र का निर्माण।

३—स्वाध्याय यानी पढ़े हुए को गुनना या कसौटी पर कसना।

आश्रम प्रणाली

आजकल की शिक्षा में पढ़ने पर ही अधिक बल दिया जाता है। दूसरा सुधार इसमें यह किया गया है कि पाठ्यक्रम से बाह्य अन्य गतिविधियों विशेषतः खेल-क्रीड़ा पर अधिक ध्यान दिया जाता है, परन्तु परिस्थितियां और साधन इस प्रकार के छात्र के समग्र विकास में बाधा बनकर आते हैं। पाँच-छः घण्टों से अधिक छात्र विद्यालय, महाविद्यालय या विश्वविद्यालय में नहीं रह पाता। अलग-अलग अध्यापक भिन्न-भिन्न विषयों को पढ़ाते हुए भी कोई एक समन्वित दृष्टिकोण छात्र को नहीं दे पाते। अध्यापक की छात्र के साथ गहरी और आन्तरिक पैठ नहीं हो पाती।

यदि छात्र एवं अध्यापक का सम्पर्क परस्पर अधिक रहे तो निश्चित ही छात्र के जीवन निर्माण पर उसका गहरा असर पड़ेगा। चौबीस घन्टे आचार-विचार को बनाने की बात ध्यान में रखकर ही छात्र का समग्र विकास सम्भव है, जो केवल आश्रम प्रणाली में ही संभव है। मुझे भलीभांति स्मरण है कि एक आवासीय शिक्षणालय में एक वर्ष से कम समय तक काम करने पर अपने छात्रों से जो सान्निध्य, विश्वास, आदर और श्रद्धा मिली, उसके साथ ही अध्यापक की विचारशैली और कर्मसरणि का भी बहुत गहरा प्रभाव उन छात्रों पर पड़ते देखा है।

छात्रों में स्वावलम्बन, परस्पर की सहायता, भिन्न-भिन्न वर्गों एवं प्रकृति के छात्रों को एक-दूसरे के अनुकूल ढालना, आर्थिक एवं वैचारिक ऊँच-नीच का तिरस्कार तथा इस प्रकार विश्व कुटुम्ब का अपने आपको उपयोगी घटक मानना आदि ऐसी विशेषताएं हैं, जो आश्रमवासीय गुरुकुल प्रणाली से अन्यत्र दुर्लभ हैं। वर्तमान पब्लिक स्कूल जहाँ उपर्युक्त अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं, वहां वे प्रचुर व्यवसाय एवं पाश्चात्य आधार शिला पर आधारित होने के कारण भारतीय वातावरण में ज्यादा उपयोगी नहीं बन पाये हैं। गुरुकुल के पाठ्यक्रमों एवं व्यवस्था में कुछ क्रान्तिकारी परिवर्तन करके इस दिशा में सराहनीय प्रारम्भ किया जा सकता है। जितना शीघ्र यह हो सके, उतना शीघ्र न केवल आर्य समाज का अपितु राष्ट्रीय शिक्षा का भी सुधार और भला हो सकेगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—सत्यपाल सिंह

कम्युनिस्ट पार्टी जिसकी नकेल विदेशों के हाथ में है ?

द्वितीय महायुद्ध ! घटनाक्रम ने एक नवीन मोड़ लिया। युद्ध के प्रति रूस का रुख बदल गया था। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की नीति भी तुरन्त बदल गई। उसने राष्ट्रीय हितों को ताक पर रख दिया और युद्ध के प्रति अपना रवैया पूर्णतः बदल दिया। देशद्रोहिता के इतिहास में एक और पृष्ठ जुड़ गया। कई चेहरों पर पड़े आवरण हट गए। विदेश निष्ठा के कारण राष्ट्रीय हित को तिलांजलि देने का जो यह कारनामा घटित हुआ, वैसा उदाहरण विश्व इतिहास में कम ही मिलेगा।

३ सितम्बर १९३९ को प्रारम्भ हुआ था द्वितीय महायुद्ध ! उसी दिन तत्कालीन भारतीय वाइसराय ने भारत के भी युद्ध में शामिल होने की घोषणा कर दी थी तथा एक अध्यादेश प्रसारित कर सम्पूर्ण आपातकालीन अधिकार स्वयं संभाल लिए थे। इस अध्यादेश के विरुद्ध सारा भारत एक हो उठा।

युद्ध छिड़ते ही कांग्रेस ने तत्काल ही ब्रिटिश शासन के विरुद्ध कोई बहुत कठोर रवैया न अपनाया था। इस पर कम्युनिस्ट काफी गर्म थे और उन्होंने कांग्रेसी नेताओं पर ब्रिटेन से सांठगांठ तक का आरोप लगा देने में भी संकोच न बरता। वे कह उठे यही तो देश को मुक्त कराने का स्वर्णिम अवसर है। उन्होंने युद्ध प्रयासों में क्षति पहुँचाना, हड़ताल व तोड़-फोड़ अपनी नीति के प्रमुख अंग बना लिए। कम्युनिस्ट पार्टी के पोलिटब्यूरो ने अक्तूबर मास में हुई अपनी एक बैठक में युद्ध को साम्राज्यवादी निरूपित करते हुए उसकी भर्त्सना भी की। प्रस्ताव में यह भी घोषित किया गया कि सत्ता पर तुरन्त अधिकार जमा लेना ही हमारा न्यायोचित लक्ष्य होना चाहिए और एतदर्थ जनता से भी इस साम्राज्यवादी युद्ध को राष्ट्रीय युद्ध में परिवर्तित कर देने का आह्वान कर दिया।

इस नीति के अवलम्बन के फलस्वरूप देश भर में कम्युनिस्ट नेताओं की पकड़ धकड़ आरम्भ हो गई। श्रीपाद अमृत डांगे, बी० टी० रणदिवे और शा० सि० मिराजकर आदि सभी प्रमुख कम्युनिस्ट नेता कारागार में डाल दिये गये। प्रतिबन्ध के कारण पार्टी का सारा ढांचा ही अस्त व्यस्त हो गया।

किन्तु इस समग्र घटनाक्रम तथा युद्ध के इस प्रारम्भिक चरण में देश को स्वतन्त्र कराने की कम्युनिस्ट पार्टी की 'तड़प' को रूस के रुख के परिप्रेक्ष्य में देखना भी अपेक्षित है। जब भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी ऐसी नीति का अवलम्बन कर रही

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

थी तो रूस और जर्मनी के आपसी सम्बन्ध हिटलर और स्तालिन के मध्य अगस्त १९३९ में सम्पन्न हुए एक समझौते के फलस्वरूप काफ़ी मैत्रीपूर्ण थे। अतएव उस समय रूस जर्मनी का विरोधी नहीं था। इसी कारण कम्युनिस्ट पार्टी भी जनता में लोकप्रियता प्राप्ति के लिए अपना उग्र रूप प्रदर्शित करने को सक्रिय हो उठी थी।

किन्तु द्वितीय महायुद्ध के दौरान ज्यों ही जर्मनी द्वारा रूस पर भी आक्रमण कर दिया गया तो विश्व राजनीति में पासे ही पलट गये। उसी के साथ साथ भारतीय कम्युनिस्टों की विदेश निष्ठा और देशद्रोहिता का पर्दा भी फाश होने लग गया। जर्मनी के द्वारा रूस पर किए गए आक्रमण से पूर्व रूस, ब्रिटेन, फ्रांस आदि जिन देशों को साम्राज्यवादी और पूंजीवादी निरूपित कर रहा था, नवीन स्थिति ने उसे उन्हीं के साथ गठबन्धन करने पर बाध्य कर दिया। विश्वभर में सर्वहारा के राज्य की स्थापना के दीवानों को पूंजीवादी कहे जाने वाले देशों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाना ही पड़ा।

अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में इस नवीन मोड़ के आते ही विश्व भर के कम्युनिस्टों का युद्ध के प्रति दृष्टिकोण ही बदल गया। येन केन प्रकारेण अपनी पितृभूमि अथवा पुण्यभूमि रूस की रक्षा ही उनका मुख्य उद्देश्य बन गया। क्रेमलिन के हाथों गिरती पड़ती भारतीय कम्युनिस्टों की आत्मा भी अपनी पितृभूमि की रक्षार्थ व्यग्र हो उठी। इस व्यग्रता में वे देशहित और कुछ ही मास पूर्व अपने द्वारा प्रदर्शित स्वतन्त्रता की उत्कंठा को भी विस्मृत कर बैठे। कल तक युद्ध को साम्राज्यवादी, जन विरोधी और भारत विरोधी बताने वाले कम्युनिस्टों के लिए वही युद्ध रूस की मित्र राष्ट्रों से संधि होते ही जनयुद्ध में बदल गया। जो जनता से युद्ध प्रयासों में बाधा डालने का आह्वान कर रहे थे, वे ही युद्ध प्रयासों में सहायतार्थ जनता को तैयार करने के प्रयत्न में ब्रिटिश सरकार के रंगरूट भर्ती करने वाले क्रीतदासों से भी दस कदम आगे बढ़ गए और उन्होंने अपने इस आचरण से सिद्ध कर दिया कि उन्हें राष्ट्रीय हितों की अपेक्षा रूसी हितों की ही चिन्ता अधिक है। १९४१ के सितम्बर मास में भारतीय कम्युनिस्टों के मार्ग दर्शक रजनी पामदत्त ने ब्रिटिश कम्युनिस्ट पार्टी के मुखपत्र 'लेबर मन्थली' में लिखा था कि भारतीय कम्युनिस्टों को युद्ध में बिना शर्त सक्रिय समर्थन देना होगा तथा इसका भारतीय स्वतन्त्रता से कोई सम्बन्ध नहीं होगा। संक्षेप में भविष्य में पार्टी की नीति का आधार सोवियत रूस की रक्षार्थ ब्रिटिश शासकों को युद्ध प्रयासों में पूर्ण सहायता तथा सभी उपलब्ध साधनों को अंग्रेज सरकार की सेवा में प्रस्तुत कराना होगा।

इसी निर्देश के अनुसार १५ दिसम्बर १९४१ को पोलिटब्यूरो ने अपने एक प्रस्ताव द्वारा इस युद्ध को जनयुद्ध घोषित कर दिया और लज्जा को ताक पर रख कर यह घोषणा भी की कि "कम्युनिस्ट पार्टी एक व्यावहारिक संगठन है। अतएव हमें नवीन परिस्थितियों के अनुरूप अपने कार्यक्रम तथा संघर्ष का स्वरूप निर्धारित करना ही होगा। इसलिए परिवर्तित अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में, भविष्य में हमारी समग्र राजनीतिक गतिविधियों का उद्देश्य भारतीय जनता को जनयुद्ध में जनभूमिका का निर्वाह करने के लिए सिद्ध बनाना होगा।"

इस निर्णय के फलस्वरूप सभी कम्युनिस्ट नेता कारागार से मुक्त कर दिये गए। २४ जुलाई १९४२ को कम्युनिस्ट पार्टी से प्रतिबन्ध हटा लिया गया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इतना ही नहीं कम्युनिस्ट पार्टी ने उसी क्रिप्स मिशन का स्वागत भी किया जिसकी कांग्रेस आदि ने आलोचना की थी। क्रिप्स मिशन असफल हो गया। जनता को ऐसा प्रतीत होने लगा कि संघर्ष ही स्वतन्त्रता का एक मार्ग पथ है। १४ जुलाई, १९४२ को कांग्रेस ने वर्धा में हुई अपनी कार्य समिति की बैठक में यह निश्चय किया कि यदि सरकार स्वाधीनता की न्यायोचित माँग को स्वीकार नहीं करेगी तो प्रबल अवज्ञा आंदोलन आरम्भ कर दिया जाएगा। महासमिति ने भी बम्बई की बैठक में इस निर्णय की पुष्टि के साथ ही साथ "भारत छोड़ो" का ऐतिहासिक आंदोलन छेड़ने का भी संकल्प कर लिया।

कांग्रेस द्वारा इस निर्णय को क्रियान्वित किए जाने के पूर्व ही ९ अगस्त, १९४२ की प्रातः सभी प्रमुख कांग्रेसी नेता बन्दी बना लिए गए। देश की क्रोधाग्नि में घी पड़ गया। सारे देश में एक महान् स्वातन्त्र्य यज्ञ छिड़ गया। देश में कांग्रेस समाजवादी दल के नेतृत्व में प्रचण्ड भूमिगत आंदोलन भी छिड़ गया। किन्तु स्वातन्त्र्य संग्राम के इस महान् यज्ञ में विघ्न डालने का विश्वासघाती पग उठाने में भी कम्युनिस्ट पार्टी ने संकोच न किया। उन्होंने आंदोलन को कुचलने में अंग्रेजी सरकार को दिल खोलकर सहयोग प्रदान किया। राष्ट्रीय नेताओं को पथ भ्रष्ट कहने तक में भी कम्युनिस्टों ने संकोच न किया। इतना ही नहीं अपितु देश गौरव नेताजी सुभाष को भी उन्होंने जापान का पिट्ठू कहने में लज्जा अनुभव न की। अनेक कम्युनिस्टों ने जासूसों की भूमिका निभाई और राष्ट्रीय नेताओं को गिरफ्तार भी कराया।

जहां कम्युनिस्टों ने युद्ध के समय राष्ट्रवादी दलों और आंदोलन की पीठ में छुरा घोंपा वहाँ देशद्रोही मुस्लिम लीग को गले लगाने का भी हर संभव प्रयास किया। जिस लीग को वे सांप्रदायिक व प्रतिक्रियावादी कहते नहीं अघाते थे उसे ही वे प्रगतिशीलता का प्रमाण पत्र देने लग गए। इतना ही नहीं अपितु कम्युनिस्ट पार्टी ने लीग की भारत विभाजन सम्बन्धी मांग को भी समर्थन प्रदान किया।

१९४४ तक कम्युनिस्ट अपनी इन्हीं गतिविधियों के कारण भारतीय जनता की दृष्टि में काफी गिर गए थे। किन्तु स्वतन्त्र भारत में आज अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में आए नवीन मोड़ के कारण एक बार ये अपनी पुरानी भूमिका पुनः निभा रहे हैं अर्थात् ये स्वयं को विपक्षी दल कहते हुए भी सत्तारूढ़ दल की हाँ में हाँ मिला रहे हैं और शायद सत्तारूढ़ दल को खोखला करके स्वयं देश की सत्ता सँभालने के स्वप्न ले रहे हैं। भारत-रूस सन्धि और बंगला देश के मुक्ति संग्राम के बाद तो इन्होंने अपने मन्त्रदाता के इंगित पर 'कांग्रेस समर्थक' होने का स्वांग भी रचा है।

प्रत्येक आर्य अपने परिवार में वेद भाष्य
लाकर प्रभु का आशीर्वाद प्राप्त करे !

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इतिहास का एक विस्मृत पृष्ठ

जब दो हजार वर्ष पूर्व अयोध्या की राजकुमारी कोरिया गई

लेखक कोरिया के एक सुप्रसिद्ध कवि हैं। उन्होंने एक प्राचीन ग्रन्थ में पढ़ा है कि दो हजार वर्ष पूर्व कोरिया में अयोध्या की राजकुमारी आकर वहां का महारानी बन गई थी...और फिर उन्होंने इस संबंध में जो अनुसंधान किया है वह नितांत रोमांचक है।

घटना आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व की है, जब एक भारतीय राजकुमारी ने कोरिया की एक बंदरगाह पर पग धरा था। आज इतनी लम्बी अवधि के उपरांत उसी प्रेम और सद्भावना सहित मैंने भारत के इस बंदरगाह (बम्बई) में पग धरा है, ऐसा लग रहा है, जैसे मैं वर्षों बाद अपनी ननिहाल को लौटा हूँ।"

कोरियाई गणतंत्र से आए कवि, लेखक और चित्रकार ली जांग वी ने दिल्ली, अयोध्या (फैजाबाद) तथा लक्ष्मणपुर (लखनऊ) की यात्रा से लौटकर जब यह बात कही तो निश्चित रूप से यह जानने के लिए उत्सुकता बढ़ी कि बार-बार अयोध्या की राजकुमारी के गीत गाने वाले महोदय सी कौन ऐसी खोज कर लाए हैं, जिससे हम अभी तक परिचित नहीं थे।

बम्बई के थियोसोफी हाल के एक कक्ष में भेंट होती है ली महोदय से जो सारे कागजात, दस्तावेज, नक्शे और रंगीन चित्र खोले तैयार बैठे हैं, यह सिद्ध करने के लिए कि ४८ ई० में २७ जुलाई के दिन एक भारतीय राजकुमारी एक स्तूप को लेकर सागर मार्ग से कोरिया पहुँची थी। इस स्तूप के खंडहर आज भी उसकी स्मृति दिलाने के लिए कोरिया में विद्यमान हैं। उस राजकुमारी की कहानी के साथ-साथ भारत-कोरिया संबंधों की अनेक तहें खुलती हैं।

बाल साहित्य के लेखक और पत्रकार प्रकृति वाले श्री ली महोदय कोरिया की मासिक पत्रिका "लिटरेचर एवं थॉट" में प्रकाशित अपने लेख की कतरनें दिखाते हैं। "शी इज एन इंडियन" और "क्वीन आफ किंग सोर्ड।" इस भारतीय राजकुमारी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पर उन्होंने पर्याप्त अनुसंधान किया है और बहुत शीघ्र एक पुस्तक लिखने वाले हैं— "अयोध्या की राजकुमारी"।

सर्वप्रथम बात चली कि कहाँ उन्हें इस बात का उल्लेख मिला, जिसे उन्होंने इस विषय में आगे बढ़ाया।

ली महोदय बताते हैं "इतिहास, धर्म और दर्शन की पुस्तकें मैं बहुत समय से पढ़ता रहा हूँ। आज से लगभग दस वर्ष पूर्व मेरे देखने में एक पुस्तक आई। "साम गल्ा यूस" (कोरिया के तीन राज्यों का इतिहास) इतिहास की यह पुस्तक कहानियों के रूप में लिखी गई है। परन्तु यह कोरिया के महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक इतिहास के सम्बन्ध में जानकारी प्रदान करती है। यह पुस्तक एक बौद्ध भिक्षु एल येन ने चीनी भाषा में लिखी थी। इस पुस्तक की केवल दो प्रतियां ही नेशनल लाइब्रेरी में मिलती हैं। पुस्तक लकड़ी के ब्लाकों में मिलती है। लोग उस युग के इतिहास को भूल चुके हैं। पुस्तक में लिखी उन घटनाओं पर उन्हें विश्वास नहीं होता। जब मैंने इस पुस्तक को पढ़ा तो उसमें एक स्थान पर अयोध्या की राजकुमारी के कोरिया आगमन के प्रसंग को पढ़कर मुझे जिज्ञासा जगी। फिर क्या था, उस कहानी के आधार पर मैंने बहुत से सूत्र खोज निकाले और इतिहास का एक नवीन अध्याय ही गढ़ दिया। इस पर अनुसंधान कार्य जारी है।

वस्तुत: कोरिया के अनेक बौद्ध भिक्षु भारत की यात्रा पर आए थे। वे अयोध्या भी गए थे। उन्होंने अयोध्या के सम्बन्ध में पर्याप्त विवरण छोड़ा है। मेरी भी भारत में काफी रुचि रही है। अयोध्या की इस राजकुमारी का प्रसंग पढ़ते ही मुझ में रामकथा रामायण के अध्ययन की प्रेरणा जगी।"

आज की खोज की उस पृष्ठभूमि को जानने के बाद मैं उनसे सीधे इस राजकुमारी की कथा जानने का आग्रह करता हूँ। "इस कथा की पुष्टि बाद में की जा सकती है।"

भावुक मन : रसमय गाथा

ली महाशय बड़ा रस लेकर अपनी कोरियाई अंग्रेजी में बहुत अटक-अटक कर कहानी प्रारम्भ करते हैं और बीच में इतने भावुक हो जाते हैं कि कहानी एक ओर रह जाती है और उनका भावुक मन प्रेम के प्रवाह में प्रवाहित हो उठता है।

"४८वीं ईसवी की बात है। २७ जुलाई को कोरिया द्वीप के दक्षिणी छोर पर से उत्तर की ओर नागडोंग नदी के दहाने पर एक विशाल भारतीय जलयान अपनी लाल-लाल पालों और पताकाओं को लहराता हुआ दृष्टिगोचर हुआ। धीरे-धीरे यह पोत राजसुरो के समुद्री दुर्ग की ओर बढ़ता आ रहा था। राजा सुरो ने इस क्षेत्र की ९ जातियों को मिलाकर कुछ ही वर्ष पूर्व एक नवीन गारक राज्य की स्थापना की थी। लगता था कि जैसे राजा को इस जलयान के आने का पूर्व अनुमान था। उस दिन प्रात: काल जब सरदारों ने घोषणा की कि राजा उनकी पुत्रियों में से रानी का चयन करेंगे तो राजा ने कहा था "जिस प्रकार किसी अलौकिक शक्ति ने मुझे राजा बनाया है, उसी प्रकार रानी का चयन भी हो जाएगा।" राजा ने एक सरदार को आदेश दिया था कि तुम दुर्ग के दक्षिण में एक द्वीप की चोटी पर चढ़ जाओ और जैसे ही लाल पालों और पताकाओं वाला जलयान (जहाज) दृष्टिगोचर हो, वहीं से संकेत कर देना।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"राजा को जब देवकृपा से मिली भावी जीवन संगिनी को लाने वाले जलयान के आगमन का समाचार दिया गया तो राजा ने एक सुन्दर तथा सजी हुई नौका में विशेष आठ सरदारों को जलयान तक भेजा, परन्तु इस जलयान की स्वामिनी अयोध्या की राजकुमारी ने राजा के इन दूतों के साथ नौका पर जाने से यह कह कर इन्कार कर दिया "तुम सब लोग मेरे लिए सर्वथा अपरिचित हो। मैं तुम्हारे साथ कैसे जा सकती हूँ ?" जब राजा को यह समाचार दिया गया तो उसने घोषणा की कि वास्तव में ही वह वही राजकुमारी है। अच्छा. अब शीघ्रता से दुर्ग के दक्षिणी मार्ग पर ऐसी व्यवस्था करो, जिससे मैं वहाँ उससे भेंट कर सकूं।"

इसी बीच राजकुमारी अपने दो कर्मचारियों और उनकी पत्नियों तथा लगभग २० अनुचरों सहित शाही सवारी पर दुर्ग की ओर बढ़ी। जहाँ से लगभग आठ किलोमीटर की दूरी पर राजा स्वयं तम्बू में आया है। राजकुमारी ने अपने रेशमी परिधान धरती माता को समर्पित कर दिए और फिर राजा के शिविर में जाकर उससे मिली। राजा और राजकुमारी इस अवसर पर विशेष रूप से निर्मित सुन्दर मंडप की ओर गए।

विवाह उत्सव के बाद जब राजा और रानी ने नए कमरे में प्रवेश किया तो राजकुमारी ने कहा कि मेरे माता-पिता ने मुझे बुलाकर बताया था कि मेरे माता-पिता को स्वप्न में आदेश हुआ है कि वह मेरा विवाह गारक (अथवा गया) राज्य के महान् राजा सुरो से करें। उन्होंने मुझ से यहाँ आने को कहा था। तब हम लोग सागर यात्रा पर निकल पड़े। परन्तु सागर की विपरीत गति के कारण हमें लौट जाना पड़ा। अगली बार हम जलयान में पावन स्तूप रखकर लाए। इस प्रकार हम बड़े प्रयत्न के उपरांत आपके पास पहुँचे हैं।

तीन दिन और तीन रात तक इस मंडप में ही राजा और रानी ने अपनी मधु यामिनी मनाई और अगस्त मास के प्रथम दिवस ये नव-विवाहित पति-पत्नी दुर्ग में आ गए। रानी को लाने वाला भारतीय पोत दूसरे दिन ही भारत लौट गया। और साथ में राजा की सौगात और बहुत से रेशमी वस्त्र तथा चावल भी अपने साथ ले गया।

ऐतिहासिकता की पुष्टि की खोज

ली महाशय बताते हैं—"यह कहानी कोरिया के तीन राज्यों की इतिहास से गारक राज्य के इतिहास वाले अंश का अनुवाद है, जिसमें राजकुमारी के आगमन से लेकर उसके विवाह तक का वर्णन है। मैंने जब उसे पढ़ा तो मेरी इच्छा हुई कि मैं राजा सुरो के समय के इतिहास की पुष्टि करूँ। संयोग से प्राचीन गारक राज्य के निकट ही मेरे पिता और पितामह का घर है।

वहाँ पहुँच कर मैंने देखा कि दो हजार वर्ष में बहुत कुछ बदल चुका है। संयोगवश मेरे पास ३०० वर्ष पुराना एक नक्शा था, जिसकी सहायता से बदले हुए क्षेत्र को भी पहचाना जा सकता था। उसके साथ ही सावुल के राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में रखी बहुत सी पुस्तकों से भी मैंने इस क्षेत्र के सम्बन्ध में थोड़ी-बहुत ऐतिहासिक और भौगोलिक जानकारी प्राप्त कर ली थी। तदुपरांत मैंने नक्शे पर अयोध्या की राजकुमारी की यात्रा का मार्ग चित्रित किया और फिर धीरे-धीरे उस प्राचीन पुस्तक में लिखे विवरण पर विश्वास होने लगा। इसके बाद मैंने अपने नक्शों

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

को लेकर उस स्थान का पुनः सर्वेक्षण किया। ६ मास के परिश्रम के बाद मुझे लगने लगा कि इतिहास की इस पुस्तक का यह दृष्टांत कि गारक राज्य के राजा की रानी भारत के नगर अयोध्या की राजकुमारी थी, केवल एक मनघड़न्त कहानी नहीं है, अपितु यह एक सुस्पष्ट तथ्य है। उसके बाद मैंने एक मासिक पत्र में अपने अनुसंधान से सम्बन्धित एक लेख लिखा। "कोरियन टाइम्स" में मेरा यह लेख सात अंकों में प्रकाशित हुआ। इस दैनिक समाचारपत्र ने यह समाचार भी प्रकाशित किया कि मैं इस बारे में अधिक जानकारी जुटाने के लिए भारत जा रहा हूँ।

कोरिया की एक कहावत है कि प्यासे को कुआं खोदना पड़ता है। इसी प्रकार मुझे भी अपनी ज्ञान पिपासा के शमन होने के नाते बहुत सोचना पड़ा। बहुत बड़ी कल्पना करनी पड़ी। तब कहीं मैं इस कहानी के तारों को जोड़ पाया, और उसे इतिहास का रूप दे सका। इस कल्पना में मुझे दो स्रोतों से सहायता मिली। एक थी मेरी दादी की प्रतिमा, जिसका तीस वर्ष पूर्व देहान्त हो चुका है। वे बड़ी उदारचित्त महिला थीं। उनका परिवार 'किम' कबीले का ही अंश है और यही प्राचीन गारक राज्य की स्थली है। संयोग से आज भी कोरियाई लोगों में अपने परिवार के आदि स्थलों का नाम अपने पारिवारिक नामों के साथ जोड़ने की परम्परा है। जैसे कैमे का 'किम' इत्यादि। हाँ, तो मैं कह रहा था कि मेरी दादी कैमे स्थान की एक 'किम' थी, जिन्हें राजा सुरो और उनकी रानी की वंशज माना जाता है। मेरी सहायता श्री प्रेमचंद के गोदान उपन्यास ने भी की थी, जिसका मैंने जापानी भाषा में अनुवाद पढ़ा। इस उपन्यास की पृष्ठभूमि अयोध्या के आसपास की ही है।

आइये ! अब राजकुमारी की कोरिया यात्रा के बारे में अपने विचार आपको बताऊँ। राजकुमारी १९२६ वर्ष पूर्व गारक राज्य के किसी बंदरगाह पर उतरी थी। उस बंदरगाह का केवल एक प्रमुख बंदरगाह कहकर ही उल्लेख किया गया है। हम वर्तमान विवरण के आधार पर केवल इतना ही अनुमान लगा सकते हैं कि वह बंदरगाह दुर्ग के दक्षिण में किसी द्वीप से एक सौ चालीस मील की ऊँचाई से देखा जा सकता था। अब इस प्रमुख बंदरगाह के उस स्थान पर प्राचीन अवशेष किंचिन्मात्र भी नहीं मिलते। संभव है नदी के बहाव ने इस क्षेत्र के भूगोल को बड़ी सीमा तक बदल दिया हो।

अपने पिछले सर्वेक्षण में मैंने उस पहाड़ी पर जहाँ से राजकुमारी के दल ने राजा का शिविर देखा था, एक पुराना स्मारक देखा, जिस पर इस बात का उल्लेख है कि यह वही स्थान है जहाँ से राजकुमारी ने रानी बनने पर धरती वंदन किया था और जहाँ इसी घटना की स्मृति में रानी ने एक मंदिर का निर्माण कराया। यह स्मारक मंदिर के नष्ट होने के बहुत समय बाद बनाया गया था। परन्तु उसके निकट ही मुझे पत्थर की एक ऐसी चट्टान दिखाई दी, जो इस स्मारक से पुरानी लगती है। जिस पर एक सर्प से लिपटे महात्मा बुद्ध की आकृति है। यहाँ मुझे राजकुमारी के जन्मस्थान के संबंध में दो सूत्र मिले। एक तो वह पुरानी प्रथा, जिसमें वधू विवाह उत्सव में अपने परिधान धरती माता को अर्पित कर देती है और दूसरी सर्प से लिपटी महात्मा बुद्ध की प्रतिमा। ("हिंदू" जालन्धर से साभार)

---

१२ अप्रैल १९७५ को आर्य समाज का १००वाँ जन्म दिन उत्साह से मनाएँ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—वचनेश

वे युगान्तकारी आठ पंक्तियां

जोधपुर राज्य एवं जोधपुर नगर के संस्थापक थे राव जोधा जी। महान् पुरुषार्थी एवं कर्मशूर। उनके वरिष्ठ पुत्र राव बीका जी ने भी अपने पूज्य पिता के पदचिह्नों का अनुगमन कर एक नवीन राज्य की नींव डाली और पिता की भांति ही एक नवीन नगर का संस्थापन भी किया। नगर बसा बीकानेर और यह भी बन गया एक राज्य ही। १४६५ से १५०५ ई० तक उन्होंने इस राज्य का सफल संचालन भी किया।

बीकानेर के शासकों की दो विशेषताएं थीं—शौर्य एवं साहित्यप्रियता। थे तो वे मुगलों के अधीन किन्तु उन्हें समय-समय पर समर्थन देकर उनकी ओर से समरांगण में कूदने के बावजूद जहाँ कभी स्वाभिमान का प्रश्न उपस्थित होता, उस पर वे कदापि आँच न आने देते थे। उन्होंने साहित्यकारों को संरक्षण प्रदान कर साहित्य की श्रीवृद्धि के लिए सदैव सब कुछ किया था। इसका परिणाम यह हुआ कि विभिन्न शासकों द्वारा एकत्रित लगभग दस हजार दुर्लभ संस्कृत ग्रंथों की पांडुलिपियाँ आज भी बीकानेर राज्य में सुरक्षित बताई जाती हैं।

बीकानेर के इन्हीं नरेशों से संबंधित एक ऐतिहासिक घटना प्रस्तुत है जिसने इतिहास के प्रवाह में आते हुए एक मोड़ को सर्वथा नवीन दिशा ही प्रदान कर दी।

× × ×

रायसिंह के भाई पृथ्वीराज अकबर के राजदरबार में रहा करते थे। वे श्रेष्ठ साहित्यकार थे, जिनकी लेखनी भी चमत्कारी थी। एक दिन अकबर ने सदर्प उन्हें बताया कि "पृथ्वीराज! जिस प्रताप की प्रशंसा करते हुए तुम नहीं अघाते, जिसकी स्वातन्त्र्य प्रियता की चर्चा तुम अनेकों को सुनाते रहते हो, जानते हो उसी तुम्हारे महाराणा प्रताप ने मुझे बादशाह के रूप में स्वीकार करने का समाचार प्रेषित किया है।"

पृथ्वीराज ने सुना तो स्तब्ध रह गए। मन व्यथा से भर उठा। असमंजस में पड़ गए और फिर उन्होंने अपने निवास स्थान पर लौट कर लेखनी संभाली, कागज हाथ में लिया। चित्त को एकाग्र कर उन्होंने निम्नलिखित शब्द लिख डाले:—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पातल सो पतसाह
बोले मुख हुँतां बयरण।
मिहिर पछम-दिसमांह,
ऊगे कारुण रावउत।
पटकूं मूंछा पाण,
के पटकूं निज तन करद।
दीजे लिख दीवाण,
इण तो महती बात इक ।।

अर्थात् क्या प्रताप के श्रीमुख से अकबर के लिए 'बादशाह' शब्द का उच्चारण किया गया है ? क्या आकाश में अब सूर्य पूर्व के स्थान पर पश्चिम से उदित हुआ करेगा ? हे दीवान ! अर्थात् महाराणा मेवाड़ अधिपति ! मुझे इन दोनों बातों में से एक बात लिख कर सूचित कर देना कि मैं अपनी तनी हुई मूंछें ताने रहूँ अथवा तलवार से अपने शरीर के टुकड़े कर डालूं।

उन्होंने इन पंक्तियों से अंकित पाती, अपने एक विश्वासपात्र व्यक्ति के हाथ मेवाड़ाधिपति हिन्दू कुल सूर्य महाराणा प्रताप के पास भिजवा दी।

× × ×

महाराणा ने पृथ्वीराज द्वारा लिखी गई पंक्तियां पढ़ीं। निराशा के जिस ज्वार ने महाराणा की स्वातन्त्र्य संग्रामी तलवार को म्यान में जाने के लिए प्रेरित किया था, इन पंक्तियों के चमत्कार से सर्वथा शांत हो गयी और पुनः स्वदेश की स्वतंत्रता स्वजाति के सम्मान की विजयी आकांक्षा से स्वातन्त्र्य समर के इस महान् संग्रामी का हृदय भर उठा। निराशा के घटाटोप को आत्मविश्वास की प्रखर रश्मियों ने तिरोहित कर दिया।

अब महाराणा प्रताप का लड़खड़ाता हुआ व्यक्तित्व संभल चुका था। उन्होंने पुनः स्वातन्त्र्य संग्राम रूपी महायज्ञ की ज्वालमालाएं दहका दीं। पृथ्वीराज के शब्द पृथ्वीराज की लेखनी दोनों ही धन्य हो गए और स्वदेश के स्वातन्त्र्य इतिहास में पराजय का पृष्ठ जुड़ते-जुड़ते रह गया।

दिग्दिगन्त में पुनः जयनाद गूंज उठे। स्वातन्त्र्य साधकों की टोलियां अरावली की पर्वतमालाओं में अपने सीमित साधनों किन्तु स्वातन्त्र्य साधना के भरोसे कर्त्तव्य पथ पर आरूढ़ हो उठीं।

और उसके बाद इतिहास ने देखा वह दृश्य जब दिए और तूफान की लड़ाई में साम्राज्यवाद के विरुद्ध स्वतंत्रता के मतवाले द्वारा किए जा रहे संघर्ष में एक बार पुनः आजादी का दीपक विपरीत परिस्थितियों के बवंडर को चुनौती देते हुए जल उठा।

महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र अधिक से अधिक बांटें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वर्तमान परिस्थितियां :

युवा पीढ़ी का दायित्व

भौतिक सुख समृद्धि में आकण्ठ डूबा पाश्चात्य जगत् आज अपनी मायावी सभ्यता के भार से स्वयं टूट रहा है। यूरोप हो या अमेरिका युवा पीढ़ी का मानस विक्षोभ और विद्रोह ग्रस्त है। तड़क भड़क पूर्ण परिधानों में लिपटे बदन आज प्रायः नग्न होने तथा मूल्यवान् वस्त्रों के स्थान पर मोटे, झोटे कपड़ों में तन ढाकने में ही सन्तोष की अनुभूति करने लगे हैं। गगन चुम्बी वातानुकूलित अट्टालिकाएं आज उनके मन में वितृष्णा जगा रही हैं और हिमाच्छादित शैल शिखरों के प्रति उनकी कशिश बढ़ती जा रही है। टेम्स, वोल्गा और मिसीसिपी की लहरों की अपेक्षा गंगा यमुना की नीलधारा ही उनके मन में अधिक आकर्षण जगा रही है। तात्पर्य यह है कि वैभव और विलास का केन्द्र बनी पाश्चात्य नगरियों से युवा पीढ़ी भारत की ओर भागना चाहती है, भाग रही है। उसके मन में भारत दर्शन की लालसा, भारतीय युवकों के मन में जगी विदेश दर्शन की इच्छा की तुलना में कहीं अधिक तीव्र हो उठी है। और उसका परिणाम ही है हिमालय की उपत्यकाओं और शिखरों में स्थित नगरियों की सड़क पर भटकती गौरांग युवा पीढ़ी। युवक और युवतियां। सुशिक्षित किन्तु अपनी वेशभूषा से ही उखड़े उखड़े से लगने वाले।

एक प्रश्न चिह्न !

इस स्थिति में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक ही है कि आज जो भारत अपनी आध्यात्मिक ज्ञान की थाती के कारण विश्व भर की जिज्ञासु युवा पीढ़ी के आकर्षण का केन्द्र बिन्दु बन रहा है, उस महान् पुण्यभूमि की गोदी में जन्मी, पली और बढ़ी युवा पीढ़ी क्या जगत् को दिशादान देगी अथवा स्वयं भी उस रपटीली राह पर ही पग बढ़ाएगी, जिससे आज पाश्चात्य युवक लौट रहा है। क्या उस सभ्यता की उतरन को ग्रहण करेगी जिसे यूरोप ने त्यागा है। इस प्रश्न का उत्तर देना तो सरल नहीं। किन्तु यह बात निश्चयपूर्वक कही जा सकती है कि यदि युवा पीढ़ी अपने पूर्वजों के सत्य इतिहास, स्वदेश के गति गौरव एवं वैदिक ज्ञान गरिमा से संपृक्त हो सकी तो वह मनु के इस उद्घोष को चरितार्थ कर सकेगी—

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥

हाँ, उसे इस ओर प्रवृत्त करने का दायित्व है उन जगदेखे जीवनों का जो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

युवा मनःस्थिति में आए बिखराव से चिंतित तो है, भटकाव से दुःखी तो है, किन्तु युवकों पर अपने जीवन के अनुभवों की थाती को लुटाते, जिन्हें संकोच सताता है। आज कई वृद्धजन युवा पीढ़ी के विरुद्ध नास्तिक हो जाने का फतवा भी अचानक दे बैठते हैं और स्वकर्त्तव्य की इतना कह देने मात्र में ही इतिश्री मान बैठते हैं। यह वयोवृद्ध पीढ़ी युवक वर्ग को तभी सन्मार्ग दिखा सकती है, जब इस तथ्य को हृदयंगम करले कि 'ईश्वर में विश्वास न करने वाला जितना नास्तिक है, उससे बड़ा नास्तिक वह कि जो स्वयं में विश्वास नहीं रखता।' और इस दृष्टि से हर निराश मन में यह भाव जाग सकता है कि युवा पीढ़ी का मन बिखराव से ग्रस्त भले ही हो किन्तु उसे नास्तिक की संज्ञा देना यदि पूर्णरूपेण नहीं तो बड़ी सीमा तक तो निश्चित रूप से ही गलत होगा।

आदर्श आवश्यक और......

किन्तु जहां वृद्धजनों का एक दायित्व है, वहां युवा पीढ़ी का भी यह पावन कर्त्तव्य है कि वह अपनी भटकन को स्वयं ही मिटाने की आस्था अपने मानस में जगाए और यह तभी संभव है जब वह एक आदर्श को समक्ष रखकर कर्त्तव्य पथ पर आरूढ़ हो। क्योंकि उसे स्मरण रखना होगा कि आदर्श विहीन मनुष्य ५० हजार गलतियां करेगा तो किसी आदर्श को समक्ष रखकर चलने वाला हजार ही।

युवा पीढ़ी को स्वसाहस को भी जगाना होगा। आज आर्थिक विपन्नता के इस युग में उसे अपने समक्ष समस्याओं का जो महासागर लहराता दिखाई दे रहा है, उसे पार करने के लिए उसे महावीर हनुमान् के सागरोल्लघंन का आख्यान तथा श्रीकृष्ण के महान् अभियान एवं देव दयानन्द के दिग्विजय अनुष्ठान के उदाहरण अपने समक्ष रखने होंगे। उन्हें समझना होगा कि यदि वे नाना प्रलोभनों के बावजूद सत्य पर आरूढ़ रहे तो उन्हें ऐसी महान् शक्ति प्राप्त होगी जिसके समक्ष लोग ऐसी कोई बात कहते हुए भी डरेंगे जिसे वह सत्य नहीं समझते। किन्तु इस स्थिति में आने के लिए उन्हें कपट और प्रपंचों से अपने हृदय मंदिर को सर्वथा स्वच्छ रखना होगा।

आदर्श कौन हो?

वस्तुतः आज की स्थिति में प्रत्येक युवक को हनुमान् के जीवन को अपना आदर्श बनाना होगा। उसे स्मरण रखना होगा कि हनुमान् ने किस प्रकार श्रीराम की आज्ञा प्राप्त होते ही महोदधि की उत्ताल तरंगों को भी चुनौती देने का साहस अपने हृदय में संजोया था। उन्हें याद रखना होगा कि हनुमान् को अपने लक्ष्य की पूर्ति में इसीलिए सफलता मिली थी कि वे जहां अद्भुत प्रतिभा के धनी थे, वहां सम्पूर्ण रूपेण इन्द्रियजित् भी। आज के आर्य युवक को अपना जीवन समर्पण के उसी महान् आदर्श पर खड़ा करना होगा, क्योंकि उसके माध्यम से ही क्रमशः अन्य समग्र आदर्श जीवन में प्रकाशित होंगे। गुरु आज्ञा का सर्वतोभावेन पालन और अटूट ब्रह्मचर्य यही है सफलता की कुंजी।

आत्म संयम का विकास हो!

आत्म संयम का विकास भी युवा पीढ़ी में होना नितांत आवश्यक है, क्योंकि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सयमीजन किसी भी बाह्य वस्तु से प्रभावित नहीं हो सकते। असंयत और निरंकुश मन मानव को अधोगामी बनाकर उसके विनाश का पथ प्रशस्त करता है तो संयत मन सही अर्थों में रक्षक और प्रेरक है। आत्म संयम का विकास जीवन में गंभीरता और बालतुल्य सरलता के पारस्परिक योग पर निर्भर है। महर्षि दयानन्द ने मतान्धता से मुक्ति का जो आह्वान किया था वह भी इसकी उपलब्धि में सहायक है।

ऐसे विचारों से स्वयं को बचाना भी आवश्यक है जो आत्मा की पावनता, शुचिता और शक्ति को संकुचित कर देते हैं। उन्हें ही कुविचार की संज्ञा दी जाती है। इनके स्थान पर अपने मन को ऐसे कार्यों की ओर लगाना ही जीवन को साफल्य मंडित बनाने का मर्म है जो आत्मा की अभिव्यक्ति में सहायक है।

प्रत्येक युवक को स्मरण रहे……

वर्त्तमान परिस्थितियों में स्वदायित्व की पूर्ति के इच्छुक प्रत्येक युवक को यह स्मरण रखना चाहिए कि अर्थहीन विषयों पर छिड़ी पुरानी लड़ाइयों को त्याग देना ही युग की मांग है। प्रत्येक भारतीय युवक को यह स्मरण रखना चाहिए कि अनेक शताब्दियों तक भारत के दासता की श्रृंखला में आबद्ध रहने के कारण जहां अन्य कई होंगे वहाँ एक बड़ा कारण यह भी रहा कि पुष्ट मस्तिष्क वाले सैकड़ों व्यक्ति इसी प्रकार के विषयों को लेकर वर्षों तक तर्क वितर्क में उलझते रहे थे कि लोटा भरकर पानी दाएं हाथ से दिया जाए अथवा बाएं हाथ से। हाथ तीन बार धोए जाएं अथवा चार बार। कुल्ला पाँच बार करना उचित है या छः बार। ऐसे व्यर्थ के प्रश्नों के लिए तर्क वितर्क में ही जीवन बिता देने वाले और ऐसे विषयों पर नितांत गवेषणापूर्ण दर्शन की रचना कर डालने वाले पंडितों से कोई मार्ग दर्शन न मिल सकेगा।

महान् बनें किन्तु……

युवा पीढ़ी को इस सत्य का सदैव स्मरण रखना होगा कि त्याग के बिना कोई भी महान् कार्य सिद्ध नहीं हो सकता। इस जगत् को दिशा दान देने के लिए भारतीय युवा पीढ़ी को नाम-यश, ऐश्वर्य और हास विलास ही नहीं अपितु जीवन के समर्पण की भी सिद्धता करनी होगी।

उन्हें इस आह्वान का स्मरण रखना होगा।

जीवन कर्म सहज भीषण है।
उसका सब सुख केवल क्षण है।
यद्यपि लक्ष्य अदृश्य धूमिल है।
फिर भी वीर हृदय ! हलचल है।
अंधकार को चीर अभय हो—
बढ़ो साहसी ! जग विजयी हो।

यही आकांक्षा उन्हें पाश्चात्य युवा पीढ़ी के मार्गदर्शन में सफलता प्रदान करेगी।

———

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—सुरेन्द्र वि

विदेशों में हिन्दी की स्थिति

जिस समय मातृभूमि भारत परतन्त्रता के पाश में आबद्ध थी, उन दिनों जिन दूरदर्शी मनीषियों ने स्वतन्त्रता के साथ ही साथ स्वतन्त्र भारत की राष्ट्रभाषा रूप में आर्यभाषा (हिन्दी भाषा) की कल्पना की थी, उनमें आर्यसमाज के प्रणे महर्षि दयानन्द सरस्वती अग्रगण्य थे। देश के स्वतन्त्र होने के उपरान्त संविधान हिन्दी को को राजभाषा का स्थान प्राप्त हुआ। महर्षि का स्वप्न तो पूर्ण होता ल किन्तु राजनीति की रपटीली राहों में राजभाषा हिन्दी का रथ अटक गया औ अंग्रेजी वास्तविक अर्थों में राज्यासीन रही, जब कि कहा यही जा रहा है कि वह सखी भाषा है।

इस स्थिति के बावजूद हिन्दी का प्रचार और प्रसार राज्याश्रय के सहा नहीं अपितु आर्यसमाज आदि धार्मिक संगठनों के ध्येय निष्ठ कार्यकर्त्ताओं की कर्म शक्ति के फलस्वरूप देश और विदेश में हो रहा है।

विदेशों में भारतवंशी

इस समय लगभग ५० लाख भारत मूल के लोग विदेशों में निवास करते हैं जिन देशों में उनकी संख्या एक लाख से अधिक है, उनके नाम तथा अनुमानि जनसंख्या (लाख में) ये हैः—श्रीलंका (१२.३४) मलेशिया (८.२५०), मारीशस (५.२५), गुयाना (३.५०) त्रिनिदाद और तोबेगो (३.०२), बर्मा (२.७२), फिजी (२.५०), केनिया (१.७५), सिंगापुर (१.२५), तंजानिया (१.०२) तथा सुरीनाम (१.०१)। इन देशों में से कई तो ऐसे कि जिनमें भारत वंशियों का बहुमत भी है। यद्यपि ये भारतवंशी इन देशों के राजनीतिक तथा आर्थिक जीवन में घुलमिल गए हैं, फिर भी अपने पूर्वजों की संस्कृति, भाषा, वेशभूषा से अभी भी उन्होंने अपना लगाव नहीं त्यागा और इन देशों में अपनी पारस्परिक संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी को ही अपनाया है। अतएव इन देशों में भी हिन्दी का प्रचार प्रसार हुआ है। किन्तु इसके साथ ही ऐसे भी अनेक देश हैं कि जिनमें हिन्दी को प्रचार और प्रसार का अवसर उन देशों की सरकारों ने भारत के साथ अपने सम्बन्धों को सुदृढ़ बनाने के लिए किया है।

हिन्दी की शिक्षा : विदेशों में कहाँ कहाँ ?

जिन देशों में भारत की राजभाषा और राष्ट्रभाषा हिन्दी की शिक्षा की व्यवस्था है, उनके सम्बन्ध में संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ब्रिटेन—यहां के लन्दन स्कूल आफ ओरियन्टल अफ्रीकन स्टडीज में हिन्दी के अध्ययन अध्यापन का कार्य शास्त्रीय ढंग से होता है। लन्दन के ही काउन्टी स्कूल में हिन्दी एक ऐच्छिक विषय के रूप में पढ़ाई जाती है। इसके अतिरिक्त कैम्ब्रिज तथा लन्दन विश्वविद्यालयों में भी हिन्दी शिक्षा की व्यवस्था है। हिन्दी प्रचार परिषद् भी लन्दन में हिन्दी के प्रचार में रत है। इस संस्था द्वारा नियमित रूप से वर्ग लगाए जाते हैं एवं साहित्यिक व सांस्कृतिक गतिविधियों का संचालन भी किया जाता है।

अमेरिका—अमेरिका के कोलम्बिया, न्यूयार्क एवं शिकागो आदि १२ विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था है। सामान्यतः इन विश्वविद्यालयों में न्यूनतम दो वर्ष की शिक्षा आरम्भिक तथा उच्च स्तर की दी जाती है। कुछ विश्वविद्यालयों में तृतीय वर्ष के अध्यापन की व्यवस्था भी है। उच्चारण में दक्षता की दृष्टि से छात्रों को भाषा प्रयोगशाला में भी पर्याप्त समय लगाना पड़ता है। वे वहां पाठों का टेप सुनते हैं, उन्हें दुहराते हैं, रेकार्ड करते हैं तथा सुधार करते हैं।

जापान—यहां हिन्दी की लोकप्रियता में पर्याप्त वृद्धि हुई है। टोकियो विदेशी भाषा अध्ययन विश्वविद्यालय (यूनिवर्सिटी ऑफ फारेन स्टडीज), टोकियो विश्वविद्यालय, ओसाका विश्वविद्यालय आदि ५ विश्वविद्यालयों में हिन्दी की शिक्षा का प्रबन्ध है। जो लोग यहां विश्वविद्यालयों से हिन्दी पढ़कर निकलते हैं, उन्हें तुरंत नौकरी मिल जाती है।

फ्रांस—यहां 'इकोल नात्सियोनाल द्यलांगे ओरिएन्ताल विवैन्ते' में हिन्दी की शिक्षा की समुचित व्यवस्था है।

पोलैंड—इस देश में हिन्दी के पठन पाठन की व्यवस्था विगत अनेक वर्षों से जारी है। यहां के वारसा विश्वविद्यालय में हिन्दी के शिक्षण की समुचित व्यवस्था है।

श्रीलंका—भारत के इस समीपवर्ती देश में जहाँ भारत वंशियों की संख्या १२ लाख से भी अधिक है, हिन्दी के अध्ययन के प्रति पर्याप्त रुचि है। यहां विद्यालंकार और विद्योदय विश्वविद्यालयों में हिन्दी की शिक्षा का प्रबन्ध है और श्रीलंका विश्वविद्यालय द्वारा भी हिन्दी के अध्ययन हेतु एक विभाग खोला गया है।

ब्रह्मदेश बर्मा—इस देश में हिन्दी के प्रचार का क्रम १९२३ से ही चल रहा है। उस वर्ष यहां 'बर्मा हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की स्थापना हुई थी। १९२५ में बर्मा की सरकार द्वारा हिन्दी को मान्यता प्राप्त हो गई थी। यहाँ हाई स्कूल फाइनल परीक्षा में द्वितीय भाषा का स्थान भी प्रदान किया गया तो १९२१ में गांधी हिन्दी महाविद्यालय भी स्थापित हुआ। यद्यपि अब राजनीतिक चक्रों के परिणामस्वरूप बर्मा के विद्यालयों में हिन्दी को स्थान प्राप्त नहीं रहा किन्तु विश्वविद्यालयों में बी० ए० की परीक्षा में अभी भी हिन्दी के शिक्षण की व्यवस्था है।

मारीशस—भारतवंशी बहुल इस देश में आर्यसमाज और सनातन धर्म सभाओं द्वारा हिन्दी के प्रचार का भी कार्यक्रम बनाया गया है। यहाँ बंगाल

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बिहार, असम, उत्तरप्रदेश आदि से जाकर जो लोग बसे थे उन्होंने अब से २०० से भी अधिक वर्ष पूर्व ही हिन्द महासागर के इस द्वीप में हिन्दी को प्रचलित कर दिया था। यहां हिन्दी बोली और समझी ही नहीं जनताअपितु हिन्दी साहित्य का सृजन भी हो रहा है। यहाँ कई प्रमुख हिन्दी लेखक और लेखिकाएं हैं, जिनकी रचनाओं को भारत के प्रमुख पत्रों और पत्रिकाओं में भी स्थान प्राप्त हो रहा है। लगभग १८० विद्यालयों में हिन्दी की परीक्षाएं होती हैं।

कतिपय अन्य देशों में हिन्दी शिक्षा—

उपरोक्त देशों के अतिरिक्त निम्नलिखित विश्वविद्यालयों तथा संस्थाओं में भी हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था है:—(१) उट्रेख्ट विश्वविद्यालय, उट्रेख्ट (नीदरलैंड्स) पेकिंग विश्वविद्यालय बूडापेस्ट पेकिंग (चीन), बूडापेस्ट विश्वविद्यालय (हंगरी) आर्यप्रचार सभा, ब्रिटिश गयाना, अमेरिकन इण्टरनेशनल स्कूल, काबुल (अफगानिस्तान), यूनिवर्सिटी आफ क्वीन्सलैंड, आस्ट्रेलिया, ब्रूसेल्स विश्वविद्यालय ब्रूसेल्स (बेल्जियम), तेहरान विश्वविद्यालय, तेहरान (ईरान)।

स्पष्ट है कि विदेशों में हिन्दी का प्रचार और प्रसार निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है।

शिक्षा मन्त्रालय का प्रयास—

१९७० ई० में भारत के शिक्षा मन्त्रालय ने भी विदेशों में हिन्दी प्रसार के लिए एक व्यापक कार्यक्रम तैयार किया। उसी वर्ष केन्द्रीय हिन्दी समिति ने यह निर्णय लिया कि साधनों को दृष्टि में रखते हुए ये कार्यक्रम दस देशों (श्रीलंका, मलेशिया, मारीशस, फिजी, त्रिनीदाद गयाना, सुरीनाम, नेपाल तथा थाईदेश) तक ही सीमित रहेगा। किन्तु १९७१ में एक परिवर्तित कार्यक्रम निर्धारित किया गया। इसके मुख्य अंग हैं—हिन्दी के उच्च अध्ययन के लिए छात्रवृत्तियां, द्विभाषी शब्दकोष प्रकाशन, पुस्तकालयों की स्थापना, हिन्दी शिक्षकों की नियुक्ति, साहित्यकारों, पत्रकारों तथा प्रकाशकों की यात्राओं का आयोजन तथा उक्त देशों में हिन्दी को प्रोत्साहन देने हेतु आवश्यक कार्यक्रमों का निर्धारण।

पुस्तकालयों हेतु धन—

उपरोक्त देशों में पुस्तकालयों की स्थापनार्थ एक एक लाख रुपए के मूल्य की पुस्तकें कई वर्ष तक भेजी जाती रही हैं। नेपाल में ५५ हजार रुपए के मूल्य की हिन्दी पुस्तकों का एक सम्पन्न पुस्तकालय स्थापित किया गया है। फिजी सरकार ने तो हिन्दी पाठ्य पुस्तकें तैयार करने हेतु एक अनुसंधान संस्थान भी स्थापित किया है।

द्विभाषी शब्दकोश : मुद्रणालय—

फिजियन-हिन्दी शब्दकोश तैयार हो चुका है और जर्मन-हिन्दी, हिन्दी-जर्मन, चेक-हिन्दी, हिन्दी-चेक, नेपाली-हिन्दी हिन्दी-नेपाली शब्दकोष बनाने का काम हाथ में लिया जा चुका है। रूस की विज्ञान अकादमी द्वारा भी एक रूसी हिन्दी शब्दकोश का प्रकाशन किया जा चुका है। भारत सरकार ने मारीशस सरकार को एक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

लाख रुपए की लागत का एक छापाखाना हाल ही में दिया है और सुरीनाम में हिन्दी मुद्रणालय कुछ वर्षों से कार्यरत है, जिसमें वहां के भारतीय हिन्दी शिक्षक पूर्ण सहायता प्रदान करते हैं। १९७३-७४ में फिजी को दो टाइप राइटर भी भारत ने दिए थे।

राष्ट्र संघ में—

अनेक देशों में हिन्दी शिक्षक भी कार्यरत हैं। इस प्रकार हिन्दी का प्रचार और प्रसार विदेशों में भी वृद्धि पर है और उसका भविष्य उज्जवल प्रतीत होता है। हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ के कामकाज की भाषा बनाने की मांग नेताओं द्वारा की जाती रही है। हिन्दी की विदेशों में हो रही प्रगति तथा यूनेस्को के कामकाज की भाषा का सम्मानजनक पद पहले से ही प्राप्त होने से इस क्षेत्र में भी सफलता संभावित है।

यह भी आवश्यक है कि हिन्दी को अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर स्थान दिलाने की कल्पना को हृदय में संजोने वाले आर्यभाषा भक्त स्वदेश में भी हिन्दी को अपने व्यवहार में समुचित स्थान प्रदान कर इसे भारत के विभिन्न प्रदेशों में प्रचारित व प्रसारित करें।

आर्य समाज

धर्म की रक्षा के लिए

क्रान्ति का बिगुल बजा रहा है

आइए,

दयानन्द के सैनिक बनें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

काल पुरुष के हाथों के यंत्र या प्रतिरोधी ?

श्री नलिनीकान्त गुप्त

बंगाल के वयोवृद्ध क्रान्तिकारी श्री नलिनीकांत गुप्त ने पराधीनता के दिनों में स्वातन्त्र्य लक्ष्मी की आराधना हेतु अपनी समग्र आकांक्षाएं और तमन्नाएं समर्पित कर दी थीं। भारत के महान् क्रान्तिकारी तथा दार्शनिक श्री अरविन्द के साथ आपने भी कारावरण किया था। तदुपरांत आपकी साधना का क्षेत्र भी बदला और आपने भी आध्यात्मिक ज्ञान की गंगा में अवगाहन के पथ का ही अनुगमन किया। प्रस्तुत है उनका एक लेख—उनके गहन आध्यात्मिक चिंतन का फल।

आज जो नेता भारत के पथ प्रदर्शक एवं अग्रणी हैं, उन पर महान् उत्तरदायित्व है। प्रश्न यह है कि वे नवयुग के विधाता, भविष्य के कालपुरुष के हाथों के यंत्र बनेंगे या उसके प्रतिरोधी।

मानव समाज में आज प्रत्येक व्यक्ति अपना अधिकार प्राप्त करना चाहता है। यह चाह, व्यष्टि रूप से हो तो, समष्टि रूप से हो तो, है सर्वत्र।

प्रत्येक व्यक्ति, विभिन्न मानव समुदाय, श्रेणी, जाति और दल, अथवा समुदायों के भी समुदाय : नेशन (राष्ट्र) सभी अपने दावे प्रस्तुत करने तथा अधिकार जताने को सचेष्ट हैं। जीवन और सजीवता का परिचय यही तो है न।

मानव की सामान्य इच्छा

समाज में आज प्रत्येक ही बढ़ना, भोग करना और फलते-फूलते पुष्ट और समृद्ध होना चाहता है—मानो प्रत्येक व्यक्ति ही एक मूर्तिमान् क्षुधा हो। जिसके पास नहीं है, वह तो चाहता ही है ; जिसके पास है, वह और भी अधिक की फिक्र में है। किन्तु मानव के समक्ष सार्थक जीवन का यही तो एकमात्र मार्ग नहीं है। यह कोई चिरकाल से चली आई अथवा सर्वत्र सुविदित बात तो नहीं। यह तो मुख्यतः आधुनिक एवं उसमें भी यूरोपीय विचारधारा है।

प्राचीन विचारधारा

प्राचीन एवं प्राच्य विचारधारा वस्तुतः इससे भिन्न है। तदनुसार मानव

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जीवन और उद्योग का लक्ष्य अधिकार की प्राप्ति न होकर कर्त्तव्य-पालन है। उसकी सार्थकता अधिकार प्राप्ति में नहीं अपितु कर्त्तव्य पालन में है।

इस विचारधारा के अनुसार, मैं यह नहीं देखूंगा कि मेरे कौन-कौन से अधिकार हैं, मुझे क्या क्या दावे करने हैं—मैं तो केवल इतना ही कहूँगा कि मेरे कर्त्तव्य क्या हैं? व्यक्ति के समान समष्टि में भी कोई, कैसा भी समुदाय जन्म, कर्म, शिक्षा, दीक्षा या धन—किसी भी दृष्टि से कभी अपने अधिकारों के पीछे पागल न होगा। सब कोई धीर, स्थिर भाव से स्वकर्त्तव्य का निर्णय तथा पालन करने में जुट जाएंगे।

इस कर्त्तव्य बोध के अभाव में, या इसके लुप्त हो जाने पर ही मानव अपने अधिकार-आंदोलन को लेकर उठ खड़ा होता है। इस आन्दोलन का परिणाम प्रतियोगिता, द्वन्द्व, संघर्ष और विनाश होता है। यह राजसिक आसुरी पंथ है। मानव यदि कल्याण चाहता है तो उसे इस मार्ग का परित्याग करना पड़ेगा।

अधिकार स्वाभाविक प्रवृत्ति नहीं

इस धारणा में विशेष तथ्य नहीं कि अधिकार आंदोलन मानव की स्वाभाविक प्रवृत्ति है, अतएव इसे त्यागा नहीं जा सकता। मेरा मन यह स्वीकार नहीं करता कि अधिकार-भोग की लालसा छोड़ मानव में और कोई बलवती प्रेरणा ही नहीं है।

फ्रांस की क्रान्ति का मूलमंत्र था "मनुष्य का अधिकार"। किन्तु इसकी अपेक्षा मैजिनी (इटली के महान् जननायक) का मंत्र "मानव का कर्त्तव्य" कहीं ऊँचा है।

प्राचीन काल में और विशेषकर भारतीय समाज-रचना, राष्ट्र-गठन तथा व्यक्तिगत शिक्षा-दीक्षा में यही मूलनीति थी और यही मुख्य आधार। उन दिनों कर्त्तव्य का एक नाम और था—कर्त्तव्य से भी कहीं अधिक सुन्दर—'धर्म—स्वधर्म।'

स्वधर्म क्या है?

यह स्वधर्म क्या है?

अपनी-अपनी प्रवृत्ति को जानकर बाह्य स्थूल प्रकृति को नहीं, अंतःप्रकृति स्वभाव को जानकर, उसके ज्ञान और उसकी प्रेरणा के अनुसार कर्म करना ही स्वभाव नियत कर्म करना है, और यही धर्म है, यही स्वधर्म है।

प्रत्येक व्यष्टि और समष्टि, इस प्रकार यदि अपने-अपने धर्म का पालन करेगा तो मानव-समाज का एक नया रूप प्रकट होगा, जिसकी "भित्ति" संघर्ष पर न होकर समवाय पर खड़ी होगी।

स्वधर्म प्रेरणा जागृत करनी होगी

व्यष्टि और समष्टि के जीवन-कल्याण हेतु, इस प्रकार, मानव समाज के परस्पर लड़ने को उतारू श्रेणियों के स्वाधिकार-बोध की आवश्यकता नहीं है। अपितु व्यक्ति में और विभिन्न श्रेणियों में विशिष्ट स्वधर्म-चेतना और स्वधर्म प्रेरणा जागृत करनी होगी।

हाँ, केवल एक ही पक्ष में कर्त्तव्य बोध होने से काम नहीं चलेगा। कर्त्तव्य-बोध सभी पक्षों में होना चाहिए। समाज को अखंड, परिपूर्ण और सामंजस्यमय

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जीवनधारा तभी प्राप्त हो सकती है जबकि उसके अंग प्रत्यंग में वह स्वधर्म-बो जागृत हो जाए और उसकी सारी गतिविधि इसी की प्रेरणा से हो। जब सम समाज इस भावना से अनुप्राणित होगा, सारा वातावरण इस भाव से भरा होगा मानव जगत् का प्रत्येक अंग और समग्र मानव समुदाय अपने-अपने विशेष धर्मोपार्ज और कर्त्तव्य-पालन में लग जाएंगे—ठीक उसी भांति जिस प्रकार जीवित शरीर विभिन्न अंग।

समाज में अस्वस्थता कब आती है ?

स्वस्थ एवं समृद्ध समाज अनेक श्रेणियों-समुदायों का समवाय है। समाज अस्वस्थता तभी आती है, जब कोई एक विशेष श्रेणी या समुदाय सबका सर्वेसर्वा बन बैठे। जब कोई विशेष अंग समाज की समग्र जीवन शक्तियों का शोषण करत हुआ केवल स्वयं ही अधिकाधिक पुष्ट होता जाए। राजा और राज-परिषद् अभिजा संप्रदाय, योद्धा, मध्य वर्ग, कृषक, श्रमिक ये सब अलग-अलग थे। इनमें से कु मिलकर, शेष समग्र समाज पर अपना अखंड प्रभुत्व स्थापित करना चाहते हैं सामाजिक पीड़ा, विश्रंखलता और व्यर्थता का यही कारण है। स्वधर्म-सम्पादन आधार पर समाज की विभिन्न श्रेणियों का समुच्चय ही व्यक्तिगत और सामाजि सुख-कल्याण का एकमात्र उपाय है।

यह अभिप्राय नहीं है कि......

मेरा इससे यह अभिप्राय कदापि नहीं है कि भविष्य में श्रेणी-विभाग औ स्तर विभाग होंगे ही नहीं। वे होंगे; परन्तु वे किसी ऊर्ध्वतर और गंभीरतर वि से बने होंगे।.

अधिकारों का दावा करने वालों का यह कथन कि सब मनुष्य जन्म से स्वाधीन और समान हैं उतना ही और उसी रूप में सत्य है, जितना एक बृहत्त और महत्तर मंत्र के अनुसार यह कथन है कि—तत्त्वमसि !

मानव की समानता, स्वतंत्रता और सच्ची समृद्धि भागवत सत्ता में प्रतिष्ठि है। यह कह देने से काम नहीं चलेगा कि यह सत्ता तो अतिदूर, अनधिगम्य अथव सन्दिग्ध है। वास्तव में मानव जाति के उद्धार का यही एकमात्र पथ है।

भारत का दायित्व

भारत आज यही मार्ग दिखाने हेतु उठ रहा है। और समृद्धि का अन्य को अर्थ नहीं रह जाता, यदि उसे भी अन्य राष्ट्रों की न्याईं सर्वमुक्त या मुक्त बनकर रहना पड़े।

भारत की सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक व्यवस्था इसी महाव्रत लक्ष्य में रखकर करनी होगी। जो नेता ऐसे समय भारत के पथ प्रदर्शक और अग्र हैं, उन पर बहुत भारी उत्तरदायित्व है। वे नवयुग के निर्माता, भावी काल पुरुष हाथों के यंत्र बनेंगे अथवा उसके प्रतिरोधी ?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—वचनेश

१८५७ के स्वातन्त्र्य समर के एक योद्धा

अमर हुतात्मा प्रताप सिंह

१८५७ का स्वातन्त्र्य समर। ब्रिटिश राज्यसत्ता के विरुद्ध आर्य भूमि के उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश एवं आर्यावर्त की राजनीति के प्रमुख केन्द्र रहे इन्द्रप्रस्थ तक का अंचल स्वातन्त्र्य के रण निनाद से निनादित हो उठा। चूड़ी वाले हाथों ने तलवार संभाली तो जग देखे जीवन अर्थात् वृद्धजन भी अपनी वर्षों से म्यान में पड़ी करवालों को करों में संभाल कर समरांगण में कूद पड़े।

उसी स्वातन्त्र्य संग्राम का एक विस्मृत पृष्ठ प्रस्तुत है। यह गाथा है एक ऐसे नरकेहरी की जिसने स्वातन्त्र्य के महायज्ञ में हंसते-हंसते प्राणों की समिधा समर्पित की।

उत्तर प्रदेश की ऐतिहासिक नगरी है कालाकांकर। यहीं के राजवंश के एक महान् रणशूर की बलिदानी गाथा कुछ शब्दों में प्रस्तुत है। यह महावीर भी ऐसा कि जिसे इतिहासकारों की लेखनी अपनी कृतियों में भले ही स्थान न दे पाई हो किन्तु इस अंचल की माँ-बहिनों ने उसे अपने लोकगीतों में स्थान देना नहीं भुलाया। आज भी सुलतानपुर और प्रतापगढ़ के अनेक करुण कंठों से यह गूंज सुनाई पड़ सकती है "कालेकांकर के विसेनवाँ, चन्दे गाड़े वा निसनवाँ (अर्थात् कालाकांकर के विसेन वंश के वीर ने चन्दा में अपनी विजय पताका फहरा दी है।)" इन्हें सुनकर यह संतोष हुए बिना नहीं रहता कि इतिहासकारों ने भले ही उस नर-केहरी को भुला दिया हो, किन्तु उस वीर का बलिदान अनदेखा और अनबोला नहीं रहा।

सन् सत्तावन के स्वातन्त्र्य समर में जब सभी मातृभक्त केसरिया बाना पहन कर स्वातन्त्र्य लक्ष्मी रिझाने हेतु अपने जीवन प्रसून चढ़ाने को समुद्यत हो गए उन दिनों कालाकांकर में राजा हनुमंत सिंह सिंहासनासीन थे। उनके शौर्य, पराक्रम और न्यायप्रियता की चतुर्दिक् गूंज सुनाई पड़ती थी।

राजा साहब ने स्वतन्त्र्य यज्ञ में हाथ बढ़ाया। किन्तु उन्हीं दिनों रायबरेली जिले के सलोन नामक स्थान से कुछ अंग्रेज अपनी पत्नियों और बालकों को लेकर उनकी शरण में आ गए। राजा दुविधाग्रस्त हो उठे। किन्तु शीघ्र ही सोच विचार के उपरांत इस निर्णय पर पहुँचे कि आर्य संस्कृति और मर्यादा के अनुसार शरणागत की रक्षा करना ही धर्म है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उनके इस पग की प्रतिक्रिया भी अलग-अलग रूपों में हुई। किसी ने कहा कि "राजा अंग्रेजों को शरण देकर अपना राज्य बचाना चाहते हैं" तो कोई कह उठा कि "राजा को राज्य का मोह जाग उठा है।" किन्तु वह इन सभी प्रतिक्रियाओं

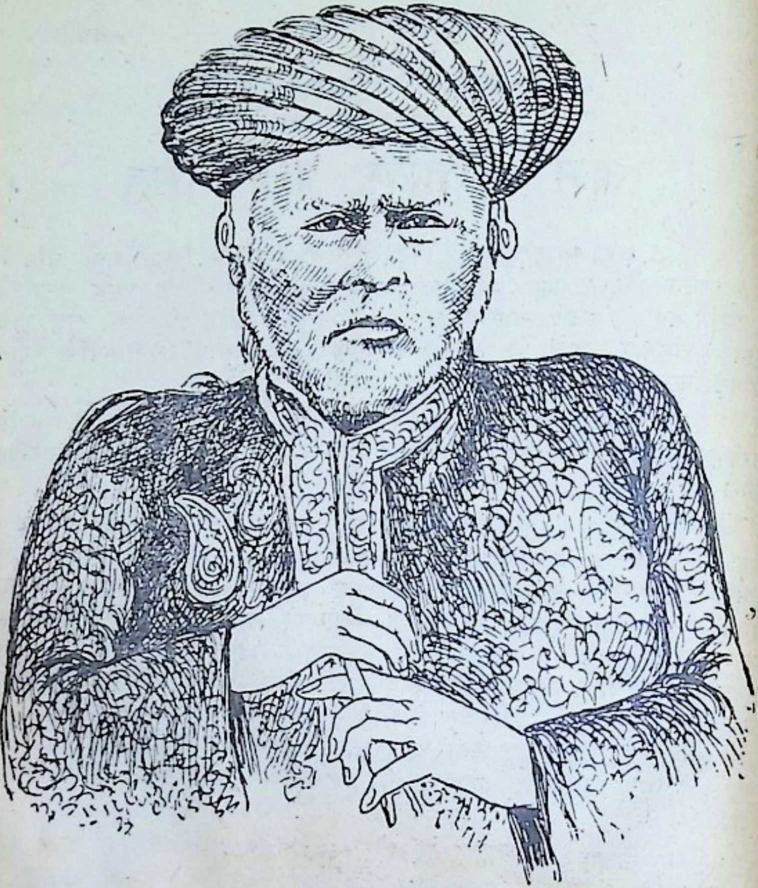

राजा हनुमन्तसिंह

से सर्वथा निर्लिप्त रहे और उन्होंने इन सभी शरणार्थियों को सकुशल अपने राज्य से निकालकर प्रयाग पहुँचा दिया।

जब इन अंग्रेजों ने राजा हनुमंतसिंह का आभार प्रकट किया तो उन्होंने गौरव से छाती तानी और बोल उठे "शरणागत की रक्षा जिस प्रकार हमारा धर्म है, उसी भांति क्षत्रिय धर्म का परिपालन भी मुझे भली-भांति आता है। आप लोगों ने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमारी मातृभूमि को दासता के पाश में आबद्ध किया हुआ है। आज हमारे देशवासी स्वातन्त्र्य समर में कूद पड़े हैं, मुझे वहाँ भी आप अग्रिम मोर्चे पर ही पाएंगे।''

उन्हें विदा देकर वापस आते ही उन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र लाल प्रतापसिंह को अंग्रेजों की सुविशाल वाहिनी को रोकने हेतु भेजा जो लखनऊ में बेलीगारद में घिरे अंग्रेजों को मुक्त कराने हेतु सुलतानपुर से होती हुई लखनऊ जा रही थी। दिएरा एवं अमेठी के नरेशों को भी इस सेना को रोकने का भार दिया गया था।

पितृ-आज्ञा को शिरोधार्य कर वीर प्रताप सिंह अपनी पत्नी और ८ वर्षीय पुत्र से विदा ले ससैन्य सुलतानपुर हेतु चल पड़े।। उनके मुख मंडल पर न किसी प्रकार की चिन्ता का भाव था और न ही मोह का।

अकेले प्रताप को जाते देखकर उनके चाचा माधोसिंह जी भी उनके साथ चल पड़े और इन्होंने सुलतानपुर जिले के चांदा नामक स्थान पर डेरा डाल दिया। ३० अक्तूबर १८५७ को अंग्रेजों की सेना जैसे ही वहाँ आई। दोनों पक्षों का मोर्चा लग गया। स्वतंत्रता के मतवाले बड़ी वीरता से लड़े किन्तु गोरखा बहुल अंग्रेजी सेना के समक्ष हल्के पड़ गए। तभी वीरवर प्रताप सिंह ने अपनी सेना सहित अंग्रेजी फौज पर धावा बोला। प्रताप के मुट्ठी भर जवान विशाल वाहिनी से टकरा गए। माधोसिंह ने अपने वीर भतीजे से कमान छोड़कर हटने और स्वयं कमान संभालने का प्रस्ताव किया। किन्तु वीर युवक प्रताप का एक ही उत्तर था ''पिताजी को रणभूमि में मेरे प्राण विसर्जन पर नहीं अपितु कायरों के समान रणक्षेत्र से भागकर घर लौट जाने पर दुःख होगा।''

वीर केसरी जूझ पड़ा और उसने लड़ते-लड़ते इस स्वातन्त्र्य यज्ञ में अपनी जीवन समिधा समर्पित कर दी। जिस मस्तक पर कुछ ही वर्ष बाद राजमुकुट धरा जाने वाला था वह शत्रु के बर्छे की नोक पर चढ़कर लखनऊ पहुँच गया।

राजमुकुट तो राज परिवारों में जन्मे अनेक लोग धारण करते हैं किन्तु ऐसा गौरव तो किसी मातृभक्त को ही प्राप्त होता है।

कालाकांकर के कुंवर के इस बलिदान ने इस राजवंश का मस्तक सदा के लिए गर्व से उन्नत कर दिया।

राजा हनुमंत सिंह को जब अपने वीर पुत्र के रणभूमि में दिवंगत होने का समाचार प्राप्त हुआ तो उन्होंने भी क्षत्रियोचित गौरव बोध के साथ अपने दरबारियों के समक्ष घोषणा की ''आज मुझे पुत्रवान् होने का गौरव प्राप्त हो गया है।''

सन् सत्तावन के स्वातन्त्र्य समर की चिनगारी इस बलिदानी समिधा से और भी अधिक प्रज्वलित हो उठी।

हे प्रताप गूंजेगा जग में सदा प्रताप तुम्हारा,
धन्य किया कुल राजवंश भी कहती गंगाधारा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—बा० पूर्णचन्

स्वतन्त्रता का मनोविज्ञान

महाभारत के युद्ध तक भारतवर्ष की स्वतन्त्रता अक्षुण्ण थी और इस देश की विजय पताका समग्र विश्व पर फहरा रही थी। अमेरिका अर्थात् पाताल देश एवं चीन आदि देशों तक भारत का कीर्तिनाद गुंजित हो रहा था और प्रभाव भी व्याप्त था। चक्रवर्ती राज्य एवं चक्रवर्ती धर्म में पूर्ण समन्वय विद्यमान था। जब राज्य सर्वांगपूर्ण और धार्मिक सिद्धान्तों पर आधारित होता है तब वह सफल होता है। तब उसकी छत्र-छाया में सभी नागरिक सकुशल रहते हैं। वे कर्त्तव्य का पालन करते और उन्हें कर्त्तव्य पालन पर आधारित जो अधिकार होते हैं वे सब उन्हें स्वतः ही मिलते रहते हैं। अधिकारों के लिए कोई आंदोलन या संघर्ष नहीं करना पड़ता।

भारतीय इतिहास में दो ग्रंथ अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। ये हैं रामायण एवं महाभारत। रामायण में रामराज्य की चर्चा है। राम वह सम्राट् थे, जो कर्त्तव्य पालन में रत रहे और कर्त्तव्य पूर्त्ति के लिए उन्होंने चक्रवर्ती राज्य को तिलांजलि देने में भी संकोच न किया। उनके भाई भरत ने भी उनके प्रतिनिधि के रूप में ही राज्य को सुव्यवस्था प्रदान की। महाभारत काल में स्थितियां कुछ बदलीं। कौरवों ने पांडवों को राज्य लौटाने में आनाकानी की और इसका भयंकर परिणाम हुआ– सारे भारत के ह्रास और विनाश की शिला रखी गई। आजकल भयंकर परिस्थिति है। दूसरों का माल या अधिकार लौटाने में ही संकोच नहीं बरता जाता; लूटने, छीनने, मारने के व दूसरे के माल को हड़पने हेतु ऊपर से नीचे तक सब तैयार हैं। अपराधों और भ्रष्टाचार का बोलबाला है। स्वार्थ सिद्धि हेतु बड़ी से बड़ी बेईमानी और बुरे से बुरा कार्य करने में भी संकोच नहीं होता। गांधीजी स्वराज्य को राम-राज्य का रूप देना चाहते थे। राम की राजधानी अयोध्या थी। अयोध्या का अर्थ है जहाँ युद्ध न हो सके। भौगोलिक दृष्टि से अयोध्या में कोई किला या खाई नहीं थी। केवल चरित्र की पवित्रता और नैतिक गठन ही उसकी सफलता का आधार था। राम-राज्य लाने के लिये किसी विधान की आवश्यकता नहीं है। उसके लिए तो नागरिकों का मनोविज्ञान ठीक करना होगा अर्थात् स्वराज्य के साथ सुराज्य की भावना प्रचलित करनी होगी और शासन के साथ अनुशासन की।

भारत को स्वराज्य मिले २७ साल हो चुके हैं। यहाँ प्रजातन्त्र है। प्रजातन्त्र में क्या मनोविज्ञान होना चाहिये उस पर विचार होना अति आवश्यक है। प्रजातन्त्र में सब को अधिकार मिले हैं। सब राजा हैं। घर-घर राजा; जहां देखो वहां राजा ही राजा हैं। परन्तु यदि सब अपने को राजा मानकर मनमानी करने पर तुले रहें और दूसरे की बात मानने को तैयार न हों तो यह प्रजातन्त्र नाम का ही होगा। स्वतन्त्रता भी नहीं रहेगी, तन्त्रहीनता ही आयेगी। अर्थात् अराजकता प्रचलित हो जायेगी जैसा आजकल हो रहा है। इस सच्चाई को हम एक इस रूप में समझ सकते

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हैं कि प्रत्येक व्यक्ति यह अनुभव करता रहे कि वह स्वयं एक राज्य है। उसका शरीर राज्य की सीमा है। उसकी राजधानी हृदय या मन है। इस राजधानी में यह सम्राट् रूप में और आत्मा मुख्यमंत्री के रूप में रहते हैं। जो पाँच ज्ञानेन्द्रियां हैं वे मंत्री हैं। अर्थात् ज्ञानेन्द्रियां अन्य मंत्रियों के स्थान में हैं। कर्मेन्द्रियों के पाँच विभाग हैं, जो उन मन्त्रियों के अधीन हैं। आत्मा को ईश्वर (सम्राट्) की आज्ञा लेनी अनिवार्य है और सम्राट् से जो आज्ञा आत्मा को प्राप्त हो उसे आत्मा मन तक पहुँचाए और मन ११वीं कर्मेन्द्रिय होकर अन्य मन्त्रियों और विभागों का ईश्वर रूपी सम्राट् की आज्ञानुसार संचालन करे, यह असली स्वराज्य का स्वरूप होगा और यही स्वराज्य होगा। यह बात यों समझ में आ सकती है कि प्रजातान्त्रिक संविधान में भी शपथ ले और दिलाने की अनिवार्य प्रथा है। शपथ ईश्वर के नाम पर ली जाती है या किसी महान् शक्ति के नाम पर। इस शपथ की प्रथा का सीधा अभिप्राय यह है कि प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर ही ईश्वर रूपी सम्राट् का और उसीका अन्य व्यक्तियों में और सारे विश्व में साम्राज्य है। इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि स्वतंत्रता का मौलिक रूप धर्म की भावना है और सच्ची आस्तिकता उसका मौलिक आधार। इस सच्चाई को हम यों भी समझ सकते हैं कि हर व्यक्ति आजाद रहना चाहता है। स्वतन्त्रता का आनंद लेना चाहता है। परन्तु वह यह सहन नहीं कर सकता कि उसके सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति स्वतंत्र रहें। कोई पिता अपने पुत्र को मनमानी करने देना नहीं चाहता। कोई मालिक अपने नौकर को ऐसी आजादी नहीं दे सकता, जिससे नौकर को उसकी आज्ञा का उल्लंघन करने का अवसर प्राप्त हो। मनुष्यों में ही हम यह भी अनुभव करते हैं कि जो पशु या वाहन मनुष्यों के प्रयोग में आते हैं, उन सब पर अंकुश होना अनिवाय है। तेज वाहन में भी ब्रेक अति आवश्यक है। बिना ब्रेक की मोटर अत्यन्त भयानक होती है। आजकल जगत् में power culture है। power पर आधारित सभ्यता का राज्य है। राजनीति का रूप power politics और प्रचलित सभ्यता का रूप power culture है। परन्तु इन दोनों powers के संघर्ष में मुख्य शक्ति अर्थात् मानव की शक्ति कुचली जा रही है। विज्ञान की उन्नति ने चमत्कार तो दिखाया है परन्तु इस चमत्कार ने एक चकाचौंध का रूप ले लिया है। इस चकाचौंध में न ईश्वर का ध्यान रहता है और न अपनी आत्मा का। इसी प्रकार राजनीति ने अधिकारों की आंधी का रूप धारण कर लिया है। इस अधिकारों की इस छीना झपटी ने एक ऐसा वातावरण तैयार किया जिससे सारी व्यवस्था बिगड़ रही है। स्वराज्य के स्थान पर अराजकता फैल गई है। प्रजातन्त्र के सम्बन्ध में यह भी विचारणीय है कि स्वराज्य मिला। इसका स्पष्ट रूप यह है कि स्वराज्य से पूर्व सारा काम विदेशियों की आज्ञा से होता था। अब हमारी राय से होता है। इस दृष्टि से राज्य एक बहूमूल्य सम्पत्ति है। इस का दुरुपयोग अत्यन्त आपत्तिजनक है। वोट का प्रयोग हाथ द्वारा होता है। चाहे लिखकर निशान लगाया जाये चाहे हाथ उठाया जाये। परन्तु यह बात समझनी है कि हाथ के ठीक प्रयोग में मस्तिष्क और हृदय दोनों सहायक होने चाहियें। मस्तिष्क बुद्धि का प्रतीक है, हृदय भावनाओं का। बिना समझे पक्षपात के आधार पर या प्रलोभन में पड़कर वोट का प्रयोग हुआ तो भयंकर परिणाम होगा। आजकल निर्वाचन की धूम है। हम इस बात पर बल देना चाहते हैं कि वोट आत्मा की आवाज के अनुसार हो। किसी के प्रलोभन में न हो। यह वोट ही स्वतन्त्रता का सच्चा मनोविज्ञान है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रखर राष्ट्रभक्त ला० लाजपतराय

—डा० भाई महावीर

"यदि स्वराज्य लेने के लिए हमारी आतुरता हमें धर्म बदलने की प्रेरणा दे और हम ईसाई बनें तो यह एक प्रकार की स्वतन्त्रता अंग्रेज हमें देंगे। परन्तु स्वराज्य तो सच्चे अर्थों में तभी होगा जब हम अपने स्वरूप में स्थिर रह कर राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करें। हमारा स्वरूप है हमारा धर्म, हमारी संस्कृति और हमारी अपनी देशगत, जातिगत भावनाएं। उन्हें त्यागकर मिलने वाला स्वराज्य, स्वराज्य नहीं है।"

इस युग में देश की श्रद्धा-विभोर जनता ने दो महामानवों को पंजाब-केसरी की उपाधि से अलंकृत किया है। उनमें से प्रथम थे महाराजा रणजीत सिंह। १८ दिसम्बर १८४५ को जन्म हुआ मुन्शी राधा किशन का जिन की प्रथम सन्तान के रूप में पंजाब को अपना दूसरा केसरी प्राप्त हुआ। अपने देश व धर्म के लिए जिस प्रकार का स्वाभिमान, अपने हिन्दूपन के लिए जितनी तड़प और उसका अपमान अथवा हानि होते देखकर जितनी तीव्र प्रतिक्रिया लाला लाजपत राय में जीवन भर होती रही, उसे देखकर यह आश्चर्यजनक लगता है कि उनके पिता अपनी आधी उम्र तक केवल नाम के हिन्दू थे—नहीं तो रमजान के दिनों में रोजे रखने में, हर रोज पांच बार नमाज पढ़ने में और कुरान आदि मुस्लिम ग्रन्थों के पारायण में शायद ही कोई मुसलमान उनसे बाजी ले पाता। यह उनके उस्ताद का प्रभाव था, जिसके परिणाम स्वरूप उनके अनेक सहपाठी विधिवत् इस्लाम स्वीकार कर चुके थे।

मुस्लिम संस्कृति में पोषित पिता

मुन्शी राधा किशन कलमा पढ़ कर बाकायदा मुसलमान नहीं बने इसका श्रेय बहुत अंश में उनकी पत्नी गुलाब देवी को ही है। मुन्शी जी ने अपने मुसलमान मित्रों को घर पर बुलाकर उनकी इच्छानुसार कई बार मांसादि का भोजन करवाया और कभी-कभी उनके यहाँ से पका हुआ भोजन लाकर खाया, यह सब उनके जैन मत, अग्रवाल वैश्य के लिए कितना सह्य था यह तो अलग प्रश्न है। किन्तु इसने उस साध्वी नारी के जीवन को अत्यन्त दुःखित बना रखा था और कई-कई दिन तक उसने गम के सिवा कुछ न खाकर और आँसू पीकर काटे थे। गोद के शिशु पर उसने अपनी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ममता भी उँडेली और उसी पर अपनी सारी आशाएं भी केन्द्रित कीं। परन्तु सारी व्यथा सहकर भी कभी उसने उन्हें छोड़ जाने की कल्पना को पास तक नहीं आने दिया।

इस्लाम की दीक्षा ?

एक बार तो मुन्शी जी ने इस्लाम की दीक्षा लेने का फैसला कर ही डाला और पत्नी व बालक को लेकर मस्जिद में जा पहुँचे। परन्तु सती नारी के अन्तर्मन की पीड़ा उसकी आँखों की मूक वाणी से कुछ ऐसी प्रकट हुई कि बाहर सीढ़ियों पर ही बाल लाजपत चीख कर रोने लग पड़ा। बस, इस रुदन से मुन्शी राधा किशन के दुर्बल मन का अस्थिर निश्चय डगमगा गया और वे लौट आए। आगे चलकर लाला जी ने शुद्धि का जो कार्य करना था उस का भी श्रीगणेश जैसे साक्षात् अपने पिता से शैशवावस्था में ही उन्होंने कर दिया। परन्तु माता के दु:ख और पिता के व्यामोह को दूर करने में अभी उन्हें बहुत देर लगने वाली थी।

विद्यार्थी जीवन

लाला लाजपत राय को पढ़ने की लगन पिता से विरासत में मिली परन्तु गरीबी के कारण उनका विधिवत् शिक्षण न हो पाया। जहाँ-जहाँ उनके पिता अध्यापक रहे प्रायः उन्हीं स्कूलों में वे पढ़े। शिक्षा काल में ही वे दो-तीन बार लाहौर आए तो उन्हें दो साथी मिले—गुरुदत्त और हंसराज। कुछ समय पूर्व ही वहाँ आर्य समाज की स्थापना हो चुकी थी और वे दोनों उस रंग में रंगे हुए थे। इस मैत्री से और इस के द्वारा आर्य समाज के जो संस्कार लाजपत राय को मिले उनसे उन्हें देश जाति की सेवा का संकल्प प्राप्त हुआ। हंसराज में जो सरल सेवा की वृत्ति थी, गुरुदत्त में जो बौद्धिक प्रतिभा थी और लाजपत राय में जो उग्र देश-प्रेम और करुणा का सागर था उनके मिश्रण से यह त्रिमूर्ति आर्य समाज की नींव बन गई। गुरुदत्त तो अकाल मृत्यु के ग्रास बने परन्तु लाला लाजपत राय और महात्मा हंसराज की मैत्री आजीवन रही।

समाज सेवा

लाजपतराय अत्यन्त भावुक प्रकृति के थे। स्वभाव की भावना प्रधानता के कारण उन्हें जहाँ कहीं कष्ट दिखाई पड़ा—चाहे वह राजपूताना का अकाल था, चाहे कांगड़ा का भूकम्प, वहीं पहुँचे और जन-जन के कष्ट को कम करने में जुटे। पैसा उन्होंने कमाया पर उसमें मन न लगाया, उसे जीवन पूर्ति का प्रमुख कार्य नहीं बनाया। यही नहीं, उन्होंने अन्याय के विरुद्ध सदा आवाज उठाई। कौन कितना बड़ा है इसकी परवाह किए बगैर उन्होंने अन्यायपूर्ण बात का विरोध किया।

मुस्लिम कांग्रेस-अध्यक्ष को उत्तर

ऐसा ही एक प्रसंग था जब १६२३ में काकीनाडा कांग्रेस के अध्यक्षपद से मौलाना मुहम्मद अली ने कहा था कि हिन्दू अपनी अछूत जाति की समस्या हल नहीं कर सकते इसलिए क्यों न उन्हें आधा-आधा बाँट लिया जाये, आधे अछूत मुसलमानों को दे दिए जाएं। यह तर्क जितना लचर और निर्लज्ज था उतना ही हिन्दू भावना पर चोट करने वाला भी था। बाकी लोग भले ही इस अपमान को पी सके परन्तु लालाजी की प्रतिक्रिया बहुत तीव्र थी—यह हमारा घरेलू प्रश्न है किसी और के दखल की इसमें जरूरत नहीं। हिन्दू ही छुआछूत की समस्या का हल करेंगे। फिर अछूत जातियाँ क्या ढोर पशु हैं जिनके इस तरह बंटवारे की बात की जा रही है ?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हिन्दू भाव उनके हृदय में क्यों रहता था ? इसका उत्तर उन्हीं के शब्दों में यह है—"यदि स्वराज्य लेने के लिए हमारी आतुरता हमें धर्म बदलने की प्रेरणा दे और हम ईसाई बनें तो यह एक प्रकार की स्वतन्त्रता अंग्रेज हमें देंगे। परन्तु स्वराज्य तो सच्चे अर्थों में तभी होगा जब हम अपने स्वरूप में स्थिर रह कर राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करें। हमारा स्वरूप है हमारा धर्म, हमारी संस्कृति और हमारी अपनी देशगत, जातिगत भावनाएं। उन्हें त्याग कर मिलने वाला स्वराज्य, स्वराज्य नहीं है।"

जब वे कांग्रेस में रहे तो ऐसे उत्साह के साथ जो सरल व सच्चे हृदयों में ही हो सकता है और जो हर कदम पर हानि लाभ का विचार करने का अभ्यस्त नहीं होता। वह "आग से खेलता है तो झुलस जाने के लिए तैयार भी रहता है।" और इसमें कोई दो मत नहीं कि ब्रिटिश सरकार के साथ संघर्ष में इन प्रश्नों पर उलझने के अवसर उनके लिए अनेक आए।

हिन्दूपन का भाव

राजनैतिक क्षेत्र में पदार्पण से लाला लाजपत राय के जीवन का दूसरा चरण प्रारम्भ होता है। कांग्रेस की स्थापना के समय से ही अलीगढ़ के सर सैयद अहमद ने मुसलमानों को उससे अलग रखने का झंडा उठा लिया था। उनके लेखों के उत्तर में अनेक पत्र उन्हीं के पुराने विचारों के हवाले से छपे। चाहे वे पत्र गुमनाम थे परन्तु अधिक दिन तक यह छिपा न रहा कि वे किस लेखनी का प्रसाद थे। उनके कारण लालाजी की जो प्रसिद्धि हुई उसका परिणाम यह था कि कांग्रेस के संस्थापक श्री ह्यूम और पंडित मालवीय आदि ने प्रयाग कांग्रेस के समय उनका स्वयं स्टेशन पर स्वागत किया और श्री ह्यूम ने उन चिट्ठियों का स्वयं सम्पादन करके पुस्तकाकार में प्रकाशित किया। लाला जी संभवतः पहले व्यक्ति थे जिन्होंने तब तक अंग्रेजी में काम करने वाली कांग्रेस के अधिवेशन में हिन्दी में भाषण दिया। उनकी असाधारण वक्तृत्व शक्ति ने उन्हें शीघ्र ही संस्था की चोटी के नेताओं की श्रेणी में ला खड़ा किया।

बंग-भंग आन्दोलन में

और तब १९०५ में आया बंग-भंग का वह निर्णय जिसके विरोध में 'लाल-बाल-पाल' की त्रिमूर्ति गरम दल के रूप में देश के उद्गारों का प्रतिनिधित्व करने लगी। प्रिंस आफ वेल्स के स्वागत के प्रश्न पर बनारस अधिवेशन में कांग्रेस के नरम और गरम दलों में टक्कर हो गई। इसके बाद जागृति की जो लहर देश भर में चली वह मीठे-मीठे भाषणों, सरकार के नाम भेजे गए आवेदन पत्रों और 'गॉड सेव दी किंग' के गायन की मर्यादाओं को ध्वस्त करके 'स्वराज्य, स्वदेशी और बहिष्कार' के मन्त्रों के रूप में चारों दिशाओं में व्यापक हो गई। इस नए जागरण के निर्माता यदि महाराष्ट्र में लोकमान्य तिलक और इनका 'केसरी' थे तो पंजाब में लाजपत और उनका 'पंजाबी' और बंगाल में विपिन चन्द्र पाल तथा अरविन्द घोष के सम्पादक में चलने वाला 'वन्देमातरम्'। लाला जी की वाणी में ओज तो था ही, अब तो वह आग बरसाने लगी। नौकरशाही इस ताक में रहने लगी कि उनको किस प्रकार रास्ते से हटाए।

तभी पंजाब में नहरी आबादियों के कानून के विरुद्ध आन्दोलन चला। सही या गलत यह धारणा कृषकों में घर कर गई कि अंग्रेज कानून द्वारा उत्तराधिकार के नियम को बदलने की तैयारी में है। लालाजी आन्दोलन के समर्थक तो थे,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पर उसमें सक्रिय नहीं हुए। किन्तु न चाहते हुए भी वे खिंच कर उसमें उलझ ही गए। लायलपुर की एक सभा में वे अध्यक्ष बनाए गए। वहीं भगत सिंह के चाचा अजीत सिंह ने भाषण दिया जो काफी विद्रोहपूर्ण था।

नरम और गरम दल

अजीतसिंह और लाजपतराय दोनों को १८१८ के पुराने रेगुलेशन के अधीन निर्वासन का दण्ड दिया गया। ६ महीने की कैद के बाद लालाजी मांडले जेल से रिहा होकर लौटे। इस कैद ने उनकी कीर्ति को दिग्दिगन्त तक फैला दिया। उसके शीघ्र बाद ही सूरत कांग्रेस का अधिवेशन था। जनता के हृदयों पर तो लालाजी का शासन था और तिलक भी चाहते थे उन्हीं को अध्यक्ष बनाना परन्तु लालाजी दलबन्दी में पड़ना न चाहते थे। अधिवेशन तो मार पिटाई और उछलते जूतों की गड़बड़ में समाप्त हो गया। साथ ही यह स्पष्ट हो गया कि नरम और गरम दल वालों के रास्ते बिलकुल फट गए हैं। लालाजी ने कांग्रेस को छोड़ा तो नहीं पर विरक्ति उन्हें अवश्य हो गई—कांग्रेस से ही नहीं, राजनीति से। कुछ काल के लिए उन्होंने फिर आर्यसमाज के क्षेत्र को अपना लिया। १९१४ में वे इंगलैंड चले गए। वे वहीं थे जब महायुद्ध शुरू हो गया।

युद्ध नीति

अब भारतीयों और कांग्रेस के सामने यह प्रश्न था कि उनकी नीति युद्ध के बारे में क्या हो। गाँधीजी बिना किसी शर्त के सरकार की सहायता करने के पक्ष में थे। लालाजी का दृष्टिकोण क्या था? "मैं युद्ध में अंग्रेजों की सहायता के विरोध का आन्दोलन चलाने के पक्ष में तो नहीं था। मैं तो उनकी युद्ध नीति का समर्थन करने को भी उद्यत था। **यदि उससे हमारे युवकों को भी सेना में प्रतिष्ठित पदों की प्राप्ति, शस्त्रास्त्र के प्रयोग तथा युद्धकला में निपुणता प्राप्त करने का अवसर मिल जाता।** सरकार ने ये दोनों बातें अस्वीकार कर दीं।...इस दशा में मैं बिना किसी शर्त के युद्ध में भर्ती होने को तैयार नहीं था। परन्तु मेरे देश के शिक्षित नेताओं का मत इससे भिन्न था। लालाजी व तिलक दोनों का दृष्टिकोण एक ही था जो कि गांधीजी की तुलना में यथार्थवादी भी था—और जो कम से कम आज तो स्वीकार किया जा सकता है—अधिक दूरदर्शिता-पूर्ण भी! इसी दूरदर्शिता ने लालाजी को, देश लौटने, कहीं नजरबन्द हो जाने के स्थान पर बाहर रहने के लिए प्रेरित किया। वे फरवरी १९२० तक नहीं लौटे।

निरंकुश लाठियां

लौटे तो ब्रेडला हाल के पीछे मैदान में उनका पहला भाषण हुआ। उसमें उनकी अंग्रेजों को चुनौती थी—"खिचड़ी पक रही है। न खाएंगे न खाने देंगे। न सोएंगे, न सोने देंगे! मंजिल पर पहुँचे बिना चैन न लेंगे।" और सच में वह महापुरुष न सोया न उसने प्रतिपक्षी को सोने दिया, जब तक निरंकुश शासकों की लाठियों ने उसे सदा की नींद न सुला दिया। उन लाठियों के विषय में लालाजी के शब्द किसी भी क्रांति की चिनगारी से कम ज्वलन्त नहीं थे—

"हम पर की गई एक-एक चोट ब्रिटिश साम्राज्य के कफन में एक-एक कील सिद्ध होगी!"

उन्होंने यह भी कहा कि यदि मैं मर गया और जिन नवयुवकों को मैंने काबू में रखा हुआ था, उन्होंने (शांतिपूर्ण

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उपायों से) अन्य मार्ग ग्रहण करने का निश्चय किया तो मेरी आत्मा उनके कार्य को आशीर्वाद देगी !"

अपने निर्वाण समय के निकट, मद्रास समुद्र तट पर हुई एक विशाल सभा में जो कुछ लालाजी ने कहा वह उनके जीवन भर के भावों को अत्यन्त सुन्दर ढंग से प्रकट करता है—

"अब जब जीवन की संध्या होते देखता हूँ और सिंहावलोकन करता हूँ तो खेद होता है कि जिस माता की कोख से जन्मा, जिसकी गोद को मलमूत्र से अपवित्र किया, जिसका स्तन पिया वह माता बन्धन में ही है और मेरे जीवन के सूर्य का अस्ताचल की ओर प्रयाण तीव्रगति से हो चला है। माता के बंधन तोड़ने के लिए मैंने कुछ नहीं किया, इसी की तीव्र वेदना मुझे व्यथित करती रही है।"

आज जब माता के बन्धन टूट चुके हैं, लाला लाजपतराय और उनके अन्य साथियों के आदर्श कहाँ तक पूरे हो रहे हैं ? आज की राजनीति की ऊहापोह में मन खोजता है ऐसे साहसी व उदार चरित्रों को जिन्होंने आदर्शवाद से प्रेरित होकर जीवन को यज्ञ बनाया हो, जिनके श्वासों में देशप्रेम हो, जिनकी धड़कन में राष्ट्र की व्यथा हो। कहाँ हैं ऐसे राजनीतिज्ञ जो स्वयं को उन महापुरुषों के उत्तराधिकारी कह सकें जिन्होंने पत्थर बनकर स्वातन्त्र्य मन्दिर की नींव को भरा था ?

—:o:—

दीपमाला के पावन पर्व पर

अपने घर में

चारों वेदों का भाष्य लाएं

=

प्रभु का आशीर्वाद मिलेगा

=

रियायती मूल्य पर प्राप्त करने का

एक अलभ्य अवसर

शीघ्रता करें—

२५) की पुस्तकें साथ लें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—डा० बलदेव शर्मा

पतंजलि और फ्रायड का योग विज्ञान

फ्रायड का विज्ञान केवल एक ही सिद्धान्त पर आश्रित है—वासनाओं अर्थात् मानसिक आवेगों के मूल में स्थित तत्त्वों का ज्ञान, और उसका स्वतः सिद्ध फल है उनसे मुक्ति।

सत्त्वानुशीलन की संक्षिप्त विधि यह है कि साधक अर्थात् जिसके मन के सत्त्व का अनुशीलन करना है उसे सुखासन में बैठाकर मन को अर्धजागृत सी उन्मनी अवस्था में लाने को कहा जाता है। मुख्य लक्ष्य होता है बुद्धि का निर्देशन रूप अंकुश त्याग कर मन को शिथिल अवस्था में लाना। जैसे स्वप्न-संसार में मन विहरण करता है वैसे ही जागृत अवस्था में साधक अपने मन को निरंकुश विहरणार्थ छोड़ दे और साधक की बुद्धि विहरण का निरीक्षण करती रहे।

सत्त्वानुशीलन करानेवाले प्रयोजक को साधक अपने इस मनोविहार का विवरण सुनाता जाता है और प्रयोजक उस-उस संस्कार के विषय में साधक से प्रश्न करता है, जिस मुख्य संस्कार पर आश्रित यह खेल हो रहा है।

कुछ दिनों में साधक का यह अभ्यासदृढ़ हो जाता है कि वह मन उच्छृंखल विहार की रास को अपनी बुद्धि से पकड़ सके—मन स्वतः ही प्रबल संस्कारों की ओर जाता है और प्रयोजक को कुछ ही बैठकों में साधक के चित्त की प्रबलता का पता लग जाता है। अर्धजागृत अवस्था की नित्य एक वा दो घण्टे की एक बठक करनी होती है।

किसी संस्कार वा वासना वा मूलेच्छा की गतिविधि अथवा विकास के क्रम के मूल तत्त्व तक अनुशीलन कर लेना ही सत्त्वानुशीलन का कार्य है। इसके होते ही वासना का मूलोच्छेदन हो जाता है। उस संस्कार वा वासना का वह प्रभाव जो साधक को किसी विशेष कार्य वा क्रिया की ओर विवशता वा बलपूर्वक धकेल कर प्रवृत्त करता था, नष्ट हो जाता है।

योग दर्शनोक्त संस्कार साक्षात् यदि यह नहीं तो और क्या है? भेद केवल इतना है कि योग मार्ग से साधक में स्वतः इतनी सामर्थ्य आ जाती है कि समाधि द्वारा अपने ही प्रयत्न से प्रबल संस्कारों का साक्षात्कार कर लेता है और सत्वानुशीलन की सहज सरल प्रक्रिया से प्रत्येक व्यक्ति प्रयोजक द्वारा निज संस्कार को जान सकता है।

दूसरा भेद है—योग द्वारा जन्म जन्मान्तर के संस्कारों का उत्खनन किया जा सकता है, परन्तु सत्त्वानुशीलन द्वारा केवल इसी जन्म के संस्कारों का।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

योग दर्शन में इस प्रक्रिया की संज्ञा प्रसंख्यान है, परिभाषा भी प्रसंख्यान है—विवेक ख्याति रविप्लवा हानोपायः—विज्ञान भिक्षु ने विवेक ख्याति का अर्थ किया है—प्रसंख्यानं विवेक साक्षात्कारः। व्यास भाष्य में **ख्याति पर्यवसानं हि चित्त चेष्टितम्**; जिसका अर्थ विज्ञान भिक्षु करते हैं—चित्तस्य व्यापारो विवेक ख्याति-पर्यन्तः, विवेक ख्याति निष्पत्तौ सत्यां प्रवर्तक पुरुषार्थासम्भवा—अर्थात् मन बुद्धि से परे चित्त, जो संस्कारों का आश्रय-स्थान है उसकी चेष्टाएं अथवा प्रवृत्तियां विवेक ख्याति तक ही सीमित हैं, क्योंकि विवेक बुद्धि से उनका साक्षात् हो जाने पर प्रवृत्तियों का प्रवर्त्तक पुरुषार्थ ही नष्ट हो जाता है। योगदर्शन में पुरुषार्थ संज्ञा है संस्कारों के उस वेग की—शक्ति की, जो प्राणियों को बलात् उस वा कर्म विशेष की ओर प्रवृत्त कराती है।

संस्कारों से प्रवृत्तियों का जन्म होता है, वृत्ति और संस्कार अप्रत्यक्ष हैं। 'वृत्ति संस्कार' चक्रमनिशमावर्तते वृत्तियां संस्कारों से, संस्कार वृत्तियों से—यह चक्र निरन्तर चल रहा है, चलता है, चलता रहेगा।

यथानुभवास्तथा संस्कारा: ते च वासनारूपाः—योग भाष्य के इस कथन से सुस्पष्ट है कि वासनाएं—इच्छाएं—भावनाएं—आवेग ये ही संस्कार हैं। प्रत्येक कर्म सेजो परिस्थिति उत्पन्न होती है और उस परिस्थिति से जो प्रक्रिया, आनन्द, सुख, दुःख, ग्लानि, राग, द्वेष, क्रोध इत्यादि; यही तो हमारा अनुभवहै और यह अनुभव ही भविष्य के लिए संस्कारों को जन्म देता है, और इन्हीं संस्कारों से प्रेरित होकर हमारी वृत्तियां, भावनाएं तथा वासनाएं बनती हैं।

वासना वही है जो अपनी तृप्ति के लिये तड़पती है, तड़पना शान्त हो जाने पर यह वासना नहीं कही जा सकती। विवेक-ख्याति से उसका साक्षात् कर लेने पर वासना की यह तड़प—वेग—पुरुषार्थ समाप्त हो जाता है। यही अद्भुत तथ्य है जो योग दर्शन से हमें प्राप्त होता है। यही मार्ग है इस वृत्ति-संस्कार चक्र से मुक्त होने का। और यही तथ्य फ्रायड ने सत्त्वानुशीलन विज्ञान द्वारा संसार को दिया है।

वासना की तृप्ति ही वासना की समाप्ति के उन्मूलन का उपाय नहीं। तृप्ति-दायक कर्म, हमें वासना का पूर्ण ज्ञान नहीं होने देते। क्योंकि एक वासना के पीछे अन्य वासना एवं वासना के पीछे वासनाएं छिपी रहती हैं। विवेक ख्याति—विवेक बुद्धि से उनका साक्षात् कर लेने पर वासना का आवेग समाप्त हो जाता है—पुरुषार्थ समाप्त हो जाता है—यही मार्ग वासना के समूल नाश का उपाय है। सत्त्वानुशीलन द्वारा साधक की वासना का साक्षात्कार करा दिया जाता है न कि उसकी तृप्ति; यही सत्त्वानुशीलन का ध्येय है।

निमित्तमप्रयोजकं प्रकृतीनां वरणभेदस्तु ततः क्षेत्रिकवत्—न हि, धर्मादि निमित्तं प्रयोजकं प्रकृतीनां भवति—धर्मादि के लिये प्रकृति प्रवृत्त नहीं होती, न हि कार्येण कार्यं प्रवर्त्यंत इति—कार्य से कारण की प्रवृत्ति नहीं होती तो प्रकृति के आवरण का निवारण कैसे होता है? उत्तर है जैसे कृषक करता है—वह क्यारी का बाँध काट देता है और जल स्वतः दूसरी क्यारी में चला जाता है। इसी प्रकार धर्म केवल प्रकृति प्रवाह के आवरण के भेदन का कार्य करता है—कारण मात्र है, आवरण के हट जाने पर प्रकृति प्रवाह अर्थात् संस्कार-वेग स्वयमेव विकारों पर छा जाता है। धर्म तो बाँध रूपी अधर्म के निवारण करने का साधन मात्र है। प्रकृतिसहज अर्थात् स्वभावसिद्ध प्रवृत्तियों के संचालन के लिए धर्म की आवश्यकता नहीं होती।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

योग दर्शन का यह सन्देश, संस्कारों के प्रकृति सिद्ध प्रवाह के मार्ग में जो बाधाएं हैं; उनके निवारण करने मात्र को ही धर्म संज्ञा देता है। फिर ये बाधाएं हटती हैं। १—प्रकृति नियत कर्म द्वारा, २—अपने संस्कारों के नियम कर्म द्वारा।

१—सत्त्वानुशीलन की प्रक्रिया का एक बार का अनुभव, अपने चित्त में छिपे हुए भावों का साक्षी रूप से दर्शन करने की योग्यता प्रदान करता है, यह योग का अंग है।

२—दूसरे साधक को यह ज्ञान क्रमशः अधिकाधिक होता जाता है कि कौन से कर्म उसकी मौलिक प्रकृति के अनुकूल हैं—अर्थात् उसके स्वभाव के अनुकूल हैं। इसका अभिप्राय यह है कि योगदर्शनोक्त धर्म का अनुसरण तो सत्त्वानुशीलन प्रक्रिया द्वारा ही हो सकना सहज है।

यहां स्वभाव का अर्थ लौकिक भाषा में प्रयुक्त 'आदत' से नहीं है प्रत्युत—**स्वभाव नियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्विषम्, सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत्। श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः** अर्थात् जो सहज रूप से अपनी प्रवृत्तियों का प्रवाह है वही हमारे संस्कारों के अनुकूल है, वह संसार की दृष्टि में दोषयुक्त औरगुण रहित भी त्याज्य नहीं है, अपितु हमारे लिए कल्याणकर है। संस्कारों के सहज प्रवाह को रोकने वाले तत्त्वों का निराकरण ही धर्म है।

जैसे अर्जुन के प्रकृति सिद्ध वा प्रकृति सहज प्रवाह में बाधक—न लड़ने की बुद्धि (जो स्पष्टतः उच्च भावना ही प्रतीत होती है) का निराकरण श्रीकृष्ण जी ने किया।

गीता के इस तात्त्विक आदेश को वरण धर्मरूप धर्म का आदेश समझना अयुक्त है।

साक्षी बनकर अपने संस्कारों का निरीक्षण करने की शक्ति को योग दर्शन में चिति शक्ति कहा है। चिति शक्ति के प्रयोग से सत्त्वानुशीलन प्रक्रिया सम्पन्न होती है।

दुःख दौर्मनस्यांगमेजयत्वम्—चित्त विक्षेप से पीड़ितों के ये लक्षण हैं।

अविद्या क्षेत्रमुत्तरेषाम में वे चारों प्रकार के मन—अर्थात् मन की अवस्थाएं बताई हैं जो सत्त्वानुशीलन विज्ञान मानता है। यह विधि प्रधान तथा सर्वमान्य है।

यौनवृत्ति-कामुक वृत्ति मनुष्य में ही नहीं, जीवमात्र में ही प्रमुख, प्रबल है—फ्रायड। परन्तु आत्मा वै कामः—ऐसे वचन शास्त्रों में हैं। यहां पर फ्रायड का कथन है कि मैं यह नहीं कहता कि सब विक्षेपों के मूल में कामुक प्रवृत्ति का ही मौलिक अवगुण्ठन होता है, पर सभ्य समाज में प्रधानतया कामुक प्रवृत्तियों का ही दमन और स्तम्भन होता देखा जाता है, फलतः प्रायः इसी के परिणाम स्वरूप विक्षेपों की उत्पत्ति होती है। साथ ही हम काम शब्द से उस व्यापक अर्थ को नहीं समझते जिसके अनुसार, आत्मा वै कामः की उक्ति चरितार्थ होती है। सत्त्वानुशीलन की स्वयं जानकारी किए बिना, अनुभव किए बिना, किसी को इसका यथार्थ ज्ञान नहीं होता। पुस्तक पढ़ लेना मात्र पर्याप्त नहीं है। योगसाधनवत् यह भी अनुभव गम्य तथा गुरुकृपा प्राप्य विज्ञान है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

क्या बच्चों को दण्ड देना जरूरी है ?

—सुनीता

बालक शरारत करते हैं घर में भी और कई बार घर से बाहर भी। इससे परेशानी माता को ही अधिक होती है। अतः आपके मन में अनेक बार यह प्रश्न उठता होगा कि शरारतों के लिए बालक को दण्ड दिया जाए या नहीं ? सामान्यतः उसका यही उत्तर सुनने को मिलता है कि बालक शरारत करता है तो उसे दण्ड दिया ही जाना चाहिए। किन्तु यदि तनिक शांत हृदय से आप विचार करेंगी तो शायद इसका उत्तर हाँ में नहीं अपितु नहीं में देंगी।

बच्चा शरारत करता है तो माता या बड़ी बहन के माथे की त्यौरियां चढ़ जाती हैं, पिता घर में हों तो उनकी भी भृकुटि तन जाती है। शरारत का उपचार ढूंढ़ने का प्रयास होता है और जब माथा पच्ची करने पर भी कोई उपचार न सूझे तो क्रोध उमड़ आता है, झल्लाहट बढ़ जाती है। फिर बच्चे को डराया जाता है धमकाया जाता है। उस समय हम इस बात की चिन्ता ही नहीं करती कि हमारे इस व्यवहार का बालक के कोमल मन पर क्या संस्कार पड़ता है। फिर इसका परिणाम होता यह है, माता द्वारा की गई पिटाई से उसका हृदय सहम उठगा। यही है सामान्य सोच विचार। किन्तु क्या ऐसे व्यवहार से बालक के मन में अपेक्षित परिवर्तन आ सकता है।

तनिक इस प्रश्न पर दूसरे ढंग से भी विचार कीजिए। यह भी विचार कीजिए कि बच्चों की इन शरारतों का मूल कहाँ है ? उन्हें शरारत या अपराध के लिए दंडित करने से पूर्व यह भी विचार लीजिए कि आखिर बालक शरारत करता क्यों है ?

विश्वास कीजिए कि यदि आप कारणों का सही पता लगा लें तो फिर दण्ड देने की नौबत ही न आएगी। उस स्थिति में उनमें वे परिवर्तन भी सरलता से आने लगेंगे जो हमारी कल्पनाओं में ही कसमसाकर रह जाते हैं। किन्तु इस परिवर्तन का आधार भय नहीं होगा अपितु होगा स्नेहपूर्ण वातावरण, परस्पर प्रेम मित्रता तथा सद्भावना।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आपको शायद यह बुरा लगेगा कि आपसे यह कहा जाए कि विचार कीजिए कि उसकी शरारतों के लिए आप कहां तक उत्तरदायी हैं ? कहीं ऐसा तो नहीं है कि आपने ही बालक के कोमल मन की क्यारी में इन शरारतों का बीजारोपण किया है। जब वह अंकुरित हो उठा है तो फूले फलेगा भी। जरा सोचिए तो सही कि क्या आपने उससे कभी झूठ नहीं बोला ? आप बालक से तो अपेक्षा रखती हैं कि वह 'सत्यं वद, धर्मं चर' का जीवित-जाग्रत नमूना बन जाए। क्या ऐसा हो सकता है ?

मान लीजिए आपने बालकों को विद्यालय जाने के समय सड़क पर यों ही घूमते देख लिया अथवा अनायास ही कभी आपकी दृष्टि कहीं जाते हुए किसी सिनेमा हाल के पास पड़ी और वहाँ आपको अपना किशोर—अपना लाड़ला भी दृष्टि गोचर हो गया और सायंकाल आपके पूछताछ करने पर उसने झूठ बोल दिया "आपने किसी और को देख लिया होगा, माताजी।" मैं तो उस समय स्कूल में था। फिर आप अपनी निगाहों का यह अपमान सहन न कर पाएंगी। आपका क्रोध पहले तो स्वयं ही नियन्त्रण खो बैठेगा। आप गरजेंगी और बरसेंगी और फिर अपने बेटे को भविष्य में ऐसा करने से रोकने की नीयत से सायंकाल कामकाज से थके हारे अपने पतिदेव के समक्ष दुखड़ा रोएंगी। वे अपनी थकान के कारण और अधिक भड़क उठेंगे। फिर हो सकता है कि वे उसके मुख पर ऐसे करारे तमाचे जड़ दें कि पाँचों उंगलियों का निशान ही उसके मुख पर अंकित हो जाए। फिर आपको लगेगा कि यह सब ठीक ही हुआ है। आपका क्रोध तो ठण्डा पड़ जाएगा। किन्तु क्या आप की स्मृति में वह दिन भी आएगा जब किसी लेनदार ने द्वार पर आवाज दी थी तो आपने ही अपने सुपुत्र को कहा था "जाओ बेटा ! कह दो कि तुम्हारे पिताजी घर में नहीं हैं।" और जब उसने आपकी दी हुई इस झूठ की सीख को हृदयंगम कर लिया और ज्यों का त्यों जाकर आपका पढ़ाया हुआ पाठ आवाज देने वाले को सुना दिया तो आपने ही तो अपने लाड़ले की पीठ थपथपा कर उसे शाबाशी दी थी।

आज के और उस दिन के झूठ में क्या अन्तर है। इसमें कम से कम आपका बालक तो कोई अन्तर नहीं कर पाएगा। जब उस दिन आपने उसे शाबाशी दी थी तो आज आप उसके झूठ बोलने पर क्रोध से संतप्त क्यों हो उठी हैं ?

क्या इस स्थिति में आप इन्कार कर सकती हैं कि अपने बालक के सुकोमल मन में झूठ बोलने का संस्कार डालने वाली आप स्वयं ही हैं। वस्तुतः बालक अनुकरण से ही तो सब कुछ सीखते हैं। जैसा माता पिता करते हैं वैसा ही वे आप भी करने लग जाते हैं।

वस्तुतः बालक के मस्तिष्क और आपके मस्तिष्क में पर्याप्त अंतर होता है। आधुनिक मनोविज्ञान का अन्वेषक बड़ी सीमा तक इस तथ्य को प्रमाणित कर चुका है कि बालक का मन फिर उसी ढंग से कार्य नहीं करता, जैसे आपका।

अब सोचिए कि क्या आप बालक की हर क्रिया, उसके स्वभाव, रुचि, इच्छाओं और व्यवहार को अपनी ही निगाहों के चश्मे से देखते हैं। फलतः हमारा अन्तः प्रेक्षण व निरीक्षण एक प्रौढ़ तथा विकसित मन का होता है। सच पूछिए तो यह कहा जा सकता है कि आपकी समझ उस समय इतनी नासमझ हो जाती है कि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जब अपने और बालक के बीच की उग्र और अनुभवों के मौलिक अंतर की उपेक्षा कर देती हैं।

वस्तुत: माताओं के मन में एक रूढ़ि जन्य संस्कार कुण्डली मारकर बैठा हुआ है। युगों से चली आ रही चीजों के रूपरंगों के अभ्यस्त बन गए हैं मन ! अत: ये आँखें उन रूपरंगों को सहन नहीं कर पातीं जो आंखों को अनोखे से लगते हैं। हमारे कानों में जब कोई नया विचार प्रवेश करता है तो हम सहसा ही बौखला उठती हैं। यदि हम अपने बालक या बालिका को कोई ऐसी बात करते देखती हैं जो हमारी अनभ्यस्त आंख के लिए सर्वथा नवीन हो तो हम नाक भौं सिकोड़ लेती हैं। हमारा मन उसके विरुद्ध विद्रोह पर उतारू हो जाता है और फिर हम चाहती हैं कि बालक की भली भांति मरम्मत या तो स्वयं करें या उसके पिताजी से करा दें।

नि:सन्देह अपने बालक या बालिका को सत्यपथ पर चलाना आपका कर्त्तव्य है, आपका अधिकार है। परन्तु अनुशासन की जो कल्पना आपने अपने हृदय में संजोई है, उसे बालकों की बाल सुलभ प्रकृति को ध्यान में रखकर हमें उन तक पहुँचाने और उनके ही तौर तरीकों से उन्हें अच्छी प्रकार समझकर उन्हीं के अनुसार चलना आवश्यक है।

यदि आप चाहती हैं कि आपका बालक आपकी मनपसन्द राह पर चले, तो उन्हें आप राह पर घसीट कर नहीं कर सकतीं अपितु उसके लिए हमें उनके मन में उस राह के प्रति प्यार, उस पर चलकर लक्ष्य तक पहुँचने की लालसा पैदा करनी होगी।

यह काम सरल नहीं। इसके लिए उसके हृदय और मस्तिष्क को उसके अनुकूल बनाना होगा। खिलौने को तो चाबी भरकर उसे एक निश्चित दिशा में दौड़ाया जा सकता है। लेकिन मानव शिशु तो खिलौना नहीं है और न ही उसमें चाबी भरना ही इतना सरल है। उसका भी अपना व्यक्तित्व होता है। इस तथ्य को आप हृदयंगम करें तो आप बालकों को सुधारने में सहायक हो सकेंगी।

१९७५ का शताब्दी कलैण्डर

२१×३१ इंच साइज : ६ रंगों में

लागत से अत्यन्त कम मूल्य पर

केवल ६५) सैकड़ा : ५५०) हजार

शीघ्रता करें। स्टाक थोड़ा है।

दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

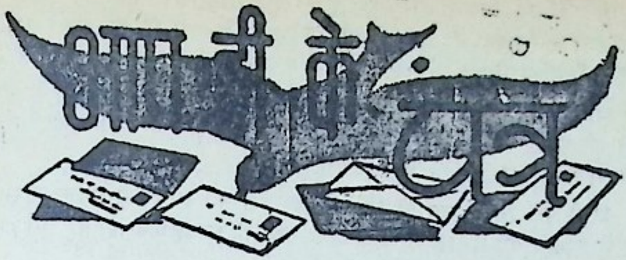

दहेज का अभिशाप : समाज का पाप

महोदया,

जिस देश में इसी क्षण जन्म लेने वाले नवजात शिशु के सिर पर भी २० रु० का ऋण चढ़ जाता है, उस देश में, हम यह नहीं कह सकते कि सामान्य मनुष्य की क्या अवस्था होगी।

ऐसे वातावरण में जीवन भर अपने खून पसीने से कमाया हुआ धन समाज के झूठे भय एवं लाज के कारण विवाह में दहेज के नाम पर फूंक दिया जाता है।

दहेज की रकम सुनते ही कन्या के पिता की बुद्धि चकराती है कि खून पसीना एक करके बच्चों को बनाया, वह कहाँ से इतना धन लाये। आखिर उसके दूसरे बच्चे भी तो हैं, और क्या सारा पैसा इन्हीं को लुटाने के लिये जुटाया है? क्या उसकी बेटी ने उसके यहाँ कन्या के रूप में जन्म लेकर कोई पाप किया है?

केवल पैसे! हाँ! केवल पैसे अर्थात् दहेज के लिये आज के सभ्य युग में भी हजारों युवतियाँ अनब्याही रह जाती हैं। इसी पाप के कारण हजारों युवतियों ने स्वयं को पेट्रोल और मिट्टी का तेल डालकर जिंदा जलाकर, जहर खाकर और जिस किसी भी ढंग से बन पड़ा अपने जीवन का अन्त कर लिया।

विवाह के समय बहू के साथ-साथ उसके आंचल बंधे दहेज की मुफ्त मोटी रकम को देखकर लड़के वाले खुश होते हैं। किन्तु वे पापी यह भूल जाते हैं कि उनकी माँ भी किसी की बेटी थी।

आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान् श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय ने "संस्कार प्रकाश" के तेरहवें अध्याय में सर्वथा यथार्थ लिखा है। वह इस प्रकार है "होना यह चाहिये था कि दहेज लेने वालों को देश का शत्रु, जाति का शत्रु, सभ्यता का शत्रु समझा जाता और उनका समाज से बहिष्कार हो जाता। पर इसके विपरीत उसी लड़के का आदर होता है जिसके विवाह में बहुत अधिक दहेज आया हो।"

एक सभ्य व्यक्ति को अपने कमाये धन पर गर्व न करना चाहिए। उससे कम पद उसका होना चाहिये जिसने स्वयं तो धन नहीं कमाया, अपने माता-पिता की सम्पत्ति पर गर्व करता है। परन्तु मेरी दृष्टि में वह व्यक्ति जो अपनी स्त्री के पिता की कमाई पर मूंछों पर ताव देता है, उससे अधिक नीच कोई नहीं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अन्तर्जातीय विवाह इस समस्या को एक सीमा तक सुलझा सकते हैं। वैसी परिस्थितियों में विवाह भी गुण, कर्म, स्वभाव देखकर ही हो सकेंगे। एक ऐसा वातावरण निर्माण किया जाये कि दहेज लेने वाला स्वयं शर्म अनुभव करे।

आवश्यकता है कि विवाह अत्यन्त पवित्रता, सादगी एवं निष्ठा से संपन्न हो। वध पक्ष की ओर से वधू के लिये आभूषणों की कोई शर्त न रखी जाये, न वर पक्ष की ओर से कोई लेन-देन की बात चलाई जाये।

दोनों पक्ष निष्ठावान हों किन्तु कन्या पक्ष को अधिक बलिदान करना होगा। दहेज रूपी राक्षस को समाज में जहाँ देखो उसे बिना हिचक किसी भी मूल्य पर जीवित जला दो।

—चितरंजन दास

सब इंजीनियर म० रा० विद्युत् मंडल,
पुरौली, त० रामटेक, जि० नागपुर

स्वतंत्रता के २७ वर्ष

महोदया,

१५ अगस्त' ४७ और १५ अगस्त'७४। अंक उलट गए हैं। ऐसा लगता है कि २७ वर्ष के इस कालखंड में भारतीय जनमानस की विचार प्रणाली में भी एक विपरीत सी स्थिति का सृजन हो गया है। त्याग के स्थान पर पद लोलुपता, बलिदान भावना के स्थान पर येन केन प्रकारेण प्रगति की आकांक्षा और कर्त्तव्य पालन के स्थान पर अधिकारों की प्राप्ति की होड़ ही भारतीय जन साधारण की प्रवृत्ति बन रही है। ४७ में स्वतंत्रता के साथ ही साथ स्वदेश के क्रूर विभाजन के परिणाम स्वरूप उजड़े-उखड़े लोगों को भारत रोजी-रोटी और मकान जुटाने में सफल रहा तो आज २७ वर्ष बाद करोड़ों इन्सान गरीबी की रेखा से भी न्यून पर जीवन बिता रहे हैं। वैज्ञानिक और कृषि क्षेत्र में की गई उपलब्धियों की चर्चा सम्बन्धी अध्याय भी अब बंद से ही लगते हैं। कानून और कायदों की जकड़न से जनसाधारण परेशान है। आज के सामान्य भारतीय का जीवन निराशा के भंवर में ग्रस्त है। धर्म के नामलेवा भी उसे व्यापार ही बना रहे हैं। इस स्थिति से उबरने और समाज को उबारने का मार्ग है देश की भौतिक और नैतिक समृद्धि। राष्ट्र के कर्णधार जितना शीघ्र इस दिशा में प्रवृत्त होंगे निराशा की घनघोर घटाएं उतना ही शीघ्रछंट और फट सकेंगी।

गणेश एवेन्यू, कलकत्ता **—कुलभूषण**

आर्य समाज सत्य की कसौटी पर

महोदया,

साप्ताहिक यज्ञ से लौटते समय एक पूर्व परिचित व्यक्ति ने कहा, "कहाँ आर्य समाज के साप्ताहिक यज्ञ में जाया करते हो, वह तो नास्तिकों का समूह है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ऐसे समाज में जाने से क्या लाभ जहां न भगवान् की प्रतिमा हो, न उनको अर्घ्य ही दिया जाता हो बल्कि उलटे हमारे पूज्य अवतारों का उपहास होता हो।

यह सब सुन, हृदय में एक तीव्र वेदना सी जागृत हो गई, मन बेचैन हो गया, क्योंकि ये सब बातें सत्य पर असत्य का प्रहार थीं। सोचा इस प्रकार की शंकायें आलोचकों के हृदय में तभी तक स्थिर रहती हैं जब तक वह आर्यसमाज या वेद के वास्तविक दर्शन को नहीं समझते, उस पर मनन नहीं करते अपितु यत्र-तत्र, वेद बाह्य कुत्सित पुरुषों द्वारा, असत्य एवं स्वार्थपूर्ण आधार पर रचित ग्रन्थों को ही पढ़ते हैं।

आर्यसमाज को नास्तिक कहने वालों ने क्या कभी नास्तिक शब्द के अर्थ को समझा है ? क्या उसे ही नास्तिक कहते हैं जो भगवान् की मूर्त्ति को तिलक नहीं लगाता ? उनको भोग नहीं लगाता ? कैसा उपहास है भगवान् का ?

वस्तुतः नास्तिको वेदनिन्दकः [मनु ।२। ११ ॥]

वेदों की निन्दा अर्थात् जो व्यक्ति वेदों का अपमान, त्याग. एवं विरुद्धाचरण करता है, वह नास्तिक है। क्या कभी आर्यसमाज वेद प्रतिकूल आचरण, नियम पालन, वेद अवज्ञा या वेद विपरीत व्यवहार करने को कहता है ? उत्तर सर्वदा निषेधात्मक ही मिलेगा। ऐसी स्थिति में आर्य समाज को नास्तिक कहना दिन को रात्रि कहने के समान है।

ब्रह्म तो सर्वान्तर्यामी, सर्वशक्तिमान्, सच्चिदानन्द, निराकार एवं सर्वव्यापक है। ऐसे ब्रह्म में आर्यसमाज विश्वास करता है। विचारो ! क्या ऐसे ब्रह्म की प्रतिमा सम्भव है ?

मात्र यह कहना कि आर्यसमाज 'राम' एवं 'कृष्ण' को नहीं मानता, अपूर्ण है। यह समाज राम एवं कृष्ण को वही मानता है जो वे वास्तव में थे। अर्थात् राम एवं कृष्ण योग विद्या में पारंगत, वेदों के ज्ञाता, अपनी संस्कृति के अनुयायी एवं धर्ममर्यादानुकूल व्यवहार करने वाले महापुरुष थे, इसी कारण 'राम' को 'मर्यादा पुरुषोत्तम एवं 'कृष्ण' को 'योगिराज' पुस्तकों में लिखा मिलता है। उनके इस रूप को आर्यसमाज भी मानता है। हाँ उन्हें ब्रह्म या ईश्वर रूप में नहीं। क्योंकि ब्रह्म सर्वव्यापक एवं निराकार है और राम तथा कृष्ण एक कालीन थे, साकार थे।

अवतार का अर्थ होता है अवतरण अर्थात् अवतरित होना (आना)। जो भी मानव हमें दृष्टि गोचर हो रहे हैं सभी अवतरित हुएहैं। फिर एक दो को ही अवतार मानना सत्य विरुद्ध है। संसार में कुछ व्यक्ति अच्छे कर्म करते हैं कुछ अच्छे कर्म किसी कारणवश नहीं कर पाते। अच्छे कर्म करने से मनुष्य महापुरुष, विद्वान्, तत्त्ववेत्ता हो सकता है, ब्रह्म नहीं। फिर सत्कर्मी को ब्रह्म, भगवान्, ईश्वर या अवतार मानना उचित नहीं।

तदेजति तन्नैजति तद् दूरे तद्वन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥

[वह ईश्वर चेतन है, गतिमय है, इसलिए वह चलता प्रतीत होता है परन्तु सर्वव्यापक होने से उसके लिए कोई अप्राप्त स्थान नहीं इसलिए वह चलता नहीं। अज्ञानियों के लिए वह दूर है ज्ञानियों के निकट है। सृष्टि के प्रत्येक अणु और प्रत्येक आत्मा के वह भीतर है और बाहर भी है। इस समस्त जड़चेतन ब्रह्माण्ड के भीतर बाहर दोनों प्रकार से व्याप्त है।]

—महावीरसिंह
नई कालौनी, कालागढ़

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation Chennai

सार्वभौम आर्यसमाज शताब्दी परिषद् का
आर्यसमाजों को आवश्यक निर्देश

१. शताब्दी वर्ष में पड़ने वाले महर्षि दयानन्द सरस्वती का जन्मदिन (१२ फरवरी) एवं इस वर्ष के शिवरात्रि (दयानन्द बोधोत्सव पर्व) को शताब्दी के पूर्व रूप में विशेष उत्साह एवं समारोह पूर्वक मनाया जाए।

२. चैत्र सुदि प्रतिपदा १२ अप्रैल १९७५ को प्रत्येक गृह, समाज, ग्राम और नगर में सोत्साह दीपमाला करके तथा विशेष यज्ञ और प्रवचनों एवं कथाओं का आयोजन करके मनाया जाए।

३. विशाल सार्वजनिक सभाएं करके महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज के सन्देश को आबाल वृद्ध सभी तक पहुँचाया जाए।

४. भारत सरकार, प्रधानमन्त्री और राष्ट्रपति को पत्र लिखे जाएं कि १२ अप्रैल १९७५ को सार्वजनिक अवकाश रखा जाए।

५. सभी समाचार पत्रों से सम्पर्क स्थापित कर उस दिन विशेषांक निकलवाने का प्रयत्न किया जाए।

६. ग्रामों और नगरों में १२ से १६ अप्रैल तक प्रभात फेरियाँ निकाली जाएं।

७. सभी क्षेत्रों में आकाशवाणी के अधिकारियों से सम्पर्क स्थापित कर उस दिन महर्षि दयानन्द सरस्वती और आर्यसमाज के सम्बन्ध में विशेष वार्ताएं प्रसारित कराई जाएं।

८. आर्यसमाज के सम्बन्ध में विशेष डाक टिकट प्रसारित कराने के लिये संचार विभाग को पत्र लिखे जाएं।

९. आर्यसमाज की सभी शिक्षण संस्थाओं में आर्यसमाज स्थापना शताब्दी के सम्बन्ध में भाषण एवं वाद विवाद प्रतियोगिताएं कराई जाएं।

१०. पुरस्कार में ऋषि दयानन्द एवं आर्यसमाज का साहित्य वितरित किया जाए।

११. शताब्दी वर्ष में आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द साहित्य के प्रचार-प्रसार की समुचित व्यवस्था की जाए। यथासम्भव प्रत्येक शिक्षक, धार्मिक पुरोहित, सामाजिक, सांस्कृतिक संस्थाओं के अधिकारियों तक आर्यसमाज का साहित्य पहुँचाने का प्रयास किया जाए।

चैत्र सुदी प्रतिपदा संवत् २०३१ तदनुसार
१२ अप्रैल १९७५ को प्रत्येक स्थान पर
आर्यसमाज शताब्दी धूमधाम से मनाएं

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तार, भ्रष्टाचार और मन्त्री

परितोष चक्रवर्ती

एक नव-निर्वाचित मन्त्री को भ्रष्टाचार सम्बन्धित एक तार ने काफी परेशान किया। बेचारे माथे पर हाथ धरे सोचने लगे—अब क्या होगा, अपने आसामियों के विरुद्ध मैं स्वयं कैसे कदम उठाऊं ?

सेक्रेटरी दौड़ा आया, पत्नी भागी आई, पूछा—श्रीमान आप इतने परेशान क्यों हैं ?'

मन्त्री जी ने तार आगे बढ़ाया, सेक्रेटरी और पत्नी को पढ़वाया। पत्नी ना समझ थी, गुमसुम हो गई। किन्तु सेक्रेटरी मुसकराया। मन्त्री को विनम्र स्वर में समझाया—'महात्मन् ! क्षमा कीजिएगा आप के मन्त्री-पद का यह पहला मौका है, अतः आप इतने से ही घबरा गए। दरअसल यह तो गत २६ वर्षों की परम्परा है, सम्बन्ध कभी खराब नहीं होते बल्कि आपसी समझ और मजबूत होती है। थोड़ा कष्ट कीजिए। आज ही अपने क्षेत्र में एक आदमी रवाना कीजिए वह जाकर समझा आए कि छापे को दर्शाने के लिये आवश्यक वस्तुएं कम से कम रख कर अधिक से अधिक छिपा दें जिससे छापे भी पड़ें, कुछ माल भी बरामद हो, जनता का गुस्सा ठण्डा हो जाए और उधर आपके शुभ चिन्तकों का बड़ा हिस्सा भी बच जाए। वे आप का गुण गाएंगे, जनता भी गुण गाएगी सम्बन्ध और अधिक सुधरेंगे।'

सेक्रेटरी की मुसकान तीन इंच फैल गई, बोला—'फिर महात्मन् ! हमारी आपकी गरीबी पर भी उन शुभचिन्तकों का ध्यान जाएगा। हमारी गरीबी को भी दूर किया जाएगा। अतः उपरोक्त कदम आप अवश्य उठाइए। परम्परा को बनाए रखिए।

मन्त्री महोदय गद्‌गद हो गए। उन्होंने सेक्रेटरी की पीठ थपथपाई और पूछा-'महंगाई के लिए क्या किया जाए ?'

'सीधी-सी बात है। महंगाई जो भोग रहे हैं हमारे देश में वे लगभग चुप हैं। चिल्लाते हैं ये मंझोले किस्म की जनता और नेता। महात्मन् ! एक ही रास्ता है आप के क्षेत्र के मंझोले नेताओं के नाम एक-एक राशन की दुकान एलाट कीजिए ! मंहगाई की चर्चा बन्द हो जाएगी और मंहगाई भी जारी रहेगी। फर्क सिर्फ इतना होगा कि महंगाई के लिए आप को परेशान नहीं किया जाएगा। मंझोले नेता केन्द्र पर सारा दोष थोपने लग जाएंगे, आप चैन की नींद सोने लगेंगे।'

नए-नए मन्त्री जी ने उस अंतिम तार का उल्लेख करते हुए पूछा—'अच्छा क्या करें जो उस कम्बख्त युवा ओवरसियर ने मुझे डायरेक्ट लिखा है कि वर्षों से एक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

डाक-बंगले का उल्लेख चला आया है, जो हर वर्ष ही मरम्मत किया गया दर्शाया गया है? पर उस कम्बख्त ने उस क्षेत्र का चार्ज लेने के साथ ही पता लगाया कि डाक-बंगला ही नदारद हैं?'

सेक्रेटरी ने अंगड़ाई ली और स्वर को कोमलतम करते हुए समझाया—'महात्मन्, बुरा न मानें। उक्त ओवरसियर भी आपकी तरह नया-नया ओवरसियरी कर रहा होगा। उसको समझाया जा सकता हैं कि न रहे बांस न बजे बांसुरी।'

मन्त्री महोदय ने जिज्ञासु नेत्रों से सेक्रेटरी की ओर देख कर पूछा—'वह कैसे?'

'श्रीमान् वर्षों से भूतपूर्व ओवरसियरों ने सरकारी आज्ञा का पालन किया है, जिस क्षेत्र में कभी कोई दौरे पर, भ्रमण पर जाता ही नहीं, वहां डाक-बंगले की क्या आवश्यकता है? किन्तु सरकारी आज्ञा के पालन के लिए उसने सरकार को दिखाया एक बंगला वना न्यारा' आखिर उन की भी गरीबी थी जो दूर हुई। आने वाले ओवरसियर्य भी रिपेयरिंग और निर्माण के नाम से अपनी-अपनी गरीबी दूर करते रहे। इस नए मुल्ले को प्याज कम खाने की सलाह दी जाए। उसे अपनी गरीबी का एहसास दिलाते हुए समझाया जाए कि बरखुरदार डाक-बंगला नहीं मिलता है तो न मिले। यदि तुम्हारा मन उसके रिपेयरिंग से नहीं भरता तो उसे अनावश्यक एवं जर्जर बन कर तुड़वाने की राशि मंजूर करा लो। रिकार्ड से बंगला भी मिट जाएगा और पुनर्निर्माण के लिए फिर किसी ओवरसियर की गरीबी हट जाएगी।'

मन्त्री महोदय की बांछें खिल गई। उन्हें लगा यह भूतपूर्व मन्त्रियों के सान्निध्य से निखरा हुआ सेक्रेटरी है, अतः उन्होंने नेक्रेटरी को निपुणता का सर्टिफिकेट दिया उसे गले लगा लिया और कहा—'तुम्हें पा कर मैं तो धन्य हो ही गया हूँ, सरकार भी आभारी है। मैं चाहता हूँ हर विभाग में तुम्हारे जैसे लोगों की नियुक्ति हो!'

सेक्रेटरी पुनः मुसकराया, उसने श्रद्धा से झुके-झुके ही उत्तर दिया—'महाशय इस मुल्क में हर विभाग को मेरे जैसे ही लोगों का सहयोग प्राप्त है अन्यथा सभी विभाग अब तक बन्द हो जाते।'

मन्त्री महोदय ने अन्तिम प्रश्न पूछा—'किन्तु तुम चुनाव क्यों नहीं लड़ते? इतना ज्ञान सेक्रेटरी बन कर फिजूल गवां रहे हो।'

सेक्रेटरी ने बताया—'बुरा न मानें श्रीमान, मन्त्रिपद अस्थायी गरीबी हटाता है, परन्तु हम स्थायी गरीबी हटाने पर ज्यादा विश्वास रखते हैं।'

मन्त्री और सेक्रेटरी दोनों के मुख पर गहरी सन्तोष की रेखाएं खिंच गईं।

==

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"श्रद्धांजली"

उन्नीसवीं शताब्दी के महान सुधारक के चरणों में

धन्य धन्य हे युग विशेष,
बनकर तिमिराकाश में,
उन्नायक भारत के,
दीप्तिमान शरद् चन्द्र।

मानवता का घोर कलङ्क
भेद भाव वैधम्य
तापस विश्व के भ्रम
भस्म किया दावानल।

आदि युग का गौरव गान,
प्लावित गुंजन मधुर महान,
झंकृत दुन्दुभी पावनता
पतित पुनीत हृदयालिंगन।

भव्य मूर्ति गाम्भीर्य निकेतन
सौरभ तेज के पुंजविराट
पथ भ्रष्ट सहस्रों के तुम
शुभ्र लक्ष्य जीवन।

दर्शाया अमरानन्द
मृग तृणा सा स्वप्न
सत्य सुनीर समय
दीन के बन्धु अनाथ सनाथ।

घृणित विषाद विधवाओं के
संचित विष पाया भेंट
सुन अजय मेधावी जय घोष
मुरझाये सुमन छल विशेष।

दया सिन्धु में लीन दयामय
भोजित पापों से नम शीश
प्रणाम तुमको स्वर्ग प्रवेश
धन्य धन्य कारुण्य प्रदीप।

—डा० संजीवराव "शास्त्री"
हैदराबाद आन्ध्र० प्र०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—वचनेश

महर्षि दयानन्द का महाप्रयाण

स्वामी जी के अन्तिम दिन

स्वामी दयानन्द-एक क्रान्तिमय जीवन-एक विद्रोही चिंतन। यही था उस युग पुरुष का जीवन सार। १८५७ के क्रान्तिसमर के सूत्रधार इस महान् मनीषी द्वारा जगाई गई राष्ट्रवाद की ज्योति से अपना पथ खोजने के लिए प्रवृत्त हुए तो सामाजिक क्षेत्र में क्रान्ति का शंखनाद करने वाले सर्व श्री केशवचन्द्र सेन, राजा राम मोहनराय एवं महर्षि देवेन्द्र ठाकुर सरीखे समाज सुधारक भी उनके अनुकरणीय जीवन से प्रभावित हुए विना न रहे।

देव दयानन्द के भव्य व्यक्तित्व ने तत्कालीन राजा और महाराजाओं को भी उनके चरणों में नतमस्तक होते-होते प्रेरित किया तो प्रजा के कल्याण हेतु देव दयानन्द द्वारा दिए गए उपदेश भी उनके लिए अमर वाक्य बन गए। अनेकों राजाओं के जीवन के प्रमाद उनके संपर्क में आकर दूर हो गए और उनमें सात्विक आदर्श एवं राजपद योग्य गुणों का विकास हुआ।

किन्तु जहाँ एक ओर महर्षि दयानन्द रूपी पारस जीवन के स्पर्श से अनेक लोहे भी कुन्दन बन रहे थे वहाँ दूसरी ओर इस देश में विशुद्ध राष्ट्रीयता और धर्म के उद्भव से सशंक वर्ग और विकृत परम्पराओं को ही धर्म मानने वाले अनेक कट्टरपंथियों का एक वर्ग उनका विरोधी भी बन गया। और इसके साथ ही उनके विरोधियों का एक और वर्ग भी उभरा, जिसकी यह धारणा थी कि यदि हिन्दू जाति एकेश्वरवाद, शुद्धि और स्त्री शिक्षा के फलस्वरूप धार्मिक क्रान्ति को सफलता मिल गई तो हिन्दुओं में विद्यमान फूट का एक बड़ा आधार समाप्त हो जाएगा।

इस प्रकार अपने और पराए अनेक ही ऋषि के कार्यों के चतुर्दिक अपनी लोह परिधि को खड़ा करके अड़ गए। किन्तु देव दयानन्द एक महावीर के तुल्य अपने संकल्पित पथ पर बढ़ते गए। १८२४ ई० को १५ अप्रैल को जन्मे इस युगद्रष्टा की अन्तिम सीमा बनी ३० अक्टूबर, १८८३ ई० की तिथि और उस दिन था, दिपावली पर्व जो इस वर्ष नवम्बर मास में पड़ रहा है।

× × ×

बात संवत् १९४० की है। जोधपुर राज्य की सत्ता महाराजा जसवंतसिंह के हाथों में थी। उनके राज्य में सभी मतों का अवलम्बन करने वालों को पूर्ण

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह को फटकारते हुए : निर्भीक दयानन्द

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त थी तो राजकीय पदों पर नियुक्ति में भी कोई भेदभाव न बरता जाता था। उन दिनों राज्य के दिवान थे फैजउल्ला खाँ। दानशील और सज्जनों तथा विद्वत् जनों और संत महात्माओं का आदर करने वाले महाराज जसवंत सिंह के चातुर्दिक चाटुकारों की मंडली ने जमा होकर राज्य की आंतरिक व्यवस्था को असन्तोषजनक बना दिया था। वे वैभव विलास में मग्न रहने लगे थे और उस समय की परम सुन्दरी वैष्णवी भगतिन नन्हीं तो उनके दिल और दिमाग पर पूर्णतः कब्जा जमा बैठी थी। वेश्या होते हुए भी थी वह कट्टर वैष्णव। उसकी छोटी बहन लाली भी थी वेश्या ही और उसने महाराजा के छोटे भाई किशोरसिंह को अपने रूप-लावण्य के पाश में आबद्ध कर लिया था। नन्हीं के राजमहल में आने पर और लौटने पर तो प्रायः महाराज ही स्वयं उसकी अगवानी करते और उसे विदाई देते। इतना ही नहीं रूप और गुण की इस जीवित जागृत प्रतिमा को महाराज 'नन्हीं जी' कहकर सम्बोधित किया करते थे।

नन्हीं का महाराज पर इतना प्रभाव था कि एक बार राज्य के एक उच्च पदाधिकारी ने महाराजा का धर्म जनगणना के अवसर पर लिखे जाने के समय भी नन्हीं से ही पूछा था। नन्हीं ने तो उसे कह दिया था कि महाराजा का धर्म 'वैष्णव' लिख दिया जाए। यह अलग बात है कि महाराजा ने इसका विरोध कर अपना धर्म 'वैदिक' ही लिखाया। इस घटना से दोनों ही बातें सिद्ध हो जाती हैं कि एक ओर नन्हीं जो कुछ कहती थी वह महाराजा के साथ अपने सम्बन्ध के कारण अधिकार पूर्वक कहती थी वहाँ यह भी कि तब तक महर्षि दयानन्द का पर्याप्त प्रभाव महाराजा जसवन्तसिंह पर पड़ चुका था और उनके मन में देव दयानन्द के प्रति श्रद्धा की भावना जाग्रत हो चुकी थी।

× × ×

पराधीन भारत को दासता की श्रृंखलाओं से मुक्ति दिलाने की साधना लिए देव दयानन्द ने १० मार्च, १८८१ ई० को भरतपुर से अपना अभियान आरम्भ किया था और लक्ष्य था क्षीण शक्ति को अपने गत गौरव का स्मरण कराकर राजा महाराजाओं को भी आचारवान, प्रजावत्सल बनाना और उनमें राष्ट्रभक्ति की भावनाएं जगाना। इस अभियान के अन्तर्गत स्वामी जी भरतपुर से अजमेर और वहाँ से मसूदा, रायपुर, बनेड़ा और चित्तौड़गढ़ में वैदिक धर्म की ज्ञान गंगा बहाते हुए बम्बई गये और फिर २५ जुलाई, १८८२ को उदयपुर पहुँचने के लिये पुनः चित्तौड़गढ़ जा पहुँचे। यही है वह पावन भूमि जिसके साथ महारानी पद्मिनी के जौहर की गाथा जुड़ी है तो सन्त मीराबाई की भक्ति कथाएं और महाराणा सांगा व प्रणवीर प्रताप के शौर्य, बलिदान और त्याग की गाथाएं भी। चित्तौड़ में महाराणा उदयपुर श्री सज्जनसिंह ने उनके स्वागत सत्कार की समुचित व्यवस्थाएं की थीं। स्वामी जी ११ अगस्त १८८२ को ब्रह्मचारी रामानन्द और पं० भीमसेन तथा स्वामी आत्मानन्द के साथ उदयपुर पधारे और वहाँ नौलखाबाग में राजकीय अतिथि के रूप में उनके स्वागतार्थ पूर्ण व्यवस्थाएं की गईं।

महाराजा महर्षि के प्रति दिन-प्रतिदिन अधिक अनुरक्त होते गए और प्रतिदिन ही वे उनके दर्शनार्थ उपस्थित होते और उपदेश सुनते और प्राचीन ग्रन्थों का अध्य-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यन भी करते। इस स्थिति का परिणाम राज्य के अधिकारियों पर भी पड़ता जा रहा था।

महर्षि दयानन्द के एक पत्र से महाराणा उदयपुर के जीवन में आए परिवर्तन पर भी प्रकाश पड़ता है। इस पत्र में महर्षि ने लिखा था:—

"महाराणा जी ने सत्संग किया, वह केवल श्रवण मात्र ही नहीं, किन्तु उसका निदिध्यासन और मनन भी उन्होंने किया। सो महाराणा जी ने केवल दिन-चर्या के उपदेश पर चलकर अपने जीवन को नियमानुसार ही नहीं बनाया, वरञ्च वेश्यादि के दर्शन को भी छोड़ दिया।"

बाद में तो राजमहलों में प्रतिदिन ही यज्ञ भी होने लगा और तांबे का यज्ञ-कुंड संपूर्ण प्रासाद में घुमाया जाता था।

महाराणा उदयपुर ने महर्षि को वेदभाष्य के लिए भी हजारों रुपए प्रदान किए और १ मार्च १८८३ को उनके शाहपुरा प्रस्थान करने के समय विदाई देने के लिए भी उपस्थित रहे।

जोधपुर नरेश का निमन्त्रण

शाहपुरा में ही महर्षि दयानन्द सरस्वती को जोधपुर नरेश महाराजा जसवंत सिंह का पत्र प्राप्त हुआ कि "आप हमें इस राज्य में पधार कर कृतार्थ करें।"

देव दयानन्द ज्येष्ठ कृष्णा चतुर्थी सं० १९४० को प्रातः शाहपुरा से जोधपुर के लिए रवाना हो गए।

मार्ग में पाली नामक स्टेशन पर ही स्वामी जी की अगवानी के लिए चारण नवलदास, एक हाथी, तीन रथ, तीन ऊंट, एक सुसज्जित गाड़ी और चार अश्वारोही सैनिकों समेत उपस्थित थे। राव राजा तेजसिंह और जवानसिंह ने भी पैदल चल कर युग पुरुष दयानन्द की अगवानी की और चरण स्पर्श कर स्वयं को धन्य माना।

महाराजा जोधपुर से भेंट

जोधपुर में फैजउल्लाखाँ के निवास स्थान पर महर्षि दयानन्द को ठहराया गया। चतुर्दिक महर्षि का जोधपुर आगमन एक चर्चा का विषय बन गया था और सकड़ों श्रद्धालुजनों का समुदाय उनके दर्शनार्थ उमड़ने लगा। स्वामी जी को जोधपुर आए १७ दिन हो गए थे और उस दिन महाराजा जसवंतसिंह भी दर्शनार्थ उद्यान में पधारे। उन्होंने स्वामी जी का अभिवादन कर उन्हें पाँच स्वर्ण मुद्राएं और एक सौ रुपए भेंट किए और अपनी विनम्रता प्रदर्शित करते हुए फर्श पर ही बैठ गए। जब उनसे आसनासीन होने को कहा तो उन्होंने नितांत श्रद्धा भावना सहित उत्तर दिया "आप हमारे स्वामी हैं भगवन् और हम सेवक। आपके समक्ष तो नीचे आसन पर बैठने में ही हमारी शोभा है।"

महाराजा जसवंतसिंह स्वामी जी से तीन घंटे तक वार्तालाप करते रहे और इसी प्रकार दो बार वे पुनः स्वामी जी की सेवा में उपस्थित हुए। इसी प्रकार स्वामी जी भी तीन बार ही राज प्रासाद को अपनी चरण रज से पवित्र करने के लिये पहुँचे।

जोधपुर में स्वामी जी द्वारा सत्य सनातन वैदिक धर्म की ज्ञान-गंगा अविरल

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रवाहित की जा रही थी। जिसमें स्नान कर अनेक जिज्ञासु जन नवजीवन पा रहे थे तो कुछ लोग ऐसे भी थे कि जिन्हें इस युग पुरुष के उपदेश अपनी 'चलती दुकानों का दिवाला निकाल देने वाले' प्रतीत हो रहे थे, इस वर्ग के लोग ही मन ही मन डाह के भाव संजोते गए। स्वामी जी की सभाओं में आकर उनके समक्ष कुछ कहने का साहस तो वे न संजो पाए किन्तु उन्होंने महर्षि के विरुद्ध षड्यन्त्र रचने आरम्भ कर दिए।

षड्यन्त्रकारियों को बल

इसी बीच एक ऐसी घटना घटित हो गई कि असंतोष का यह दावानल और भी अधिक धधक उठा। वह घटना थी नन्ही भगतिन के साथ सम्बन्धों को लेकर महर्षि द्वारा महाराजा के महल में महाराजा की उपस्थिति में ही की गई आलोचना।

हुआ यह कि एक दिन जब स्वामी जी जोधपुर नरेश से मिलने के लिए राजमहल में पधारे तो नन्हीं भगतिन भी वहाँ उपस्थित थी। द्वारपाल स्वामी जी को रोकने का साहस न संजो पाए। महाराज के आगमन का समाचार ज्यों ही महाराजा जसवंतसिंह को प्राप्त हुआ उन्होंने सेवकों को आदेश दिया कि नन्हीं भगतिन को यथाशीघ्र राजमहल से बाहर ले जाओ। शीघ्रता में नन्हीं जब पालकी में बैठ रही थी तो वह कुछ डगमगा उठी। उसे जोधपुर नरेश ने सहारा देकर संभालने का प्रयास किया और कुछ हास-परिहास सी भी हुई। इस समग्र दृश्य को महर्षि दयानन्द ने भी निहारा और वे वहीं जोधपुर नरेश से बोल उठे—"महाराज! क्षत्रिय वीर सिंह के तुल्य समझे जाते हैं। यत्र-तत्र भटकने वालियों के साथ उनका ऐसा सम्बन्ध शोचनीय तो है ही साथ ही आर्य मर्यादा के भी विपरीत आचरण है।"

महर्षि के इन वाक्यों ने नन्हीं को क्रोधाग्नि से दग्ध कर दिया किन्तु जोधपुराधीश महर्षि के वाक्यों से अभिभूत हो शांत भाव से लौट गए और तदुपरांत महर्षि ने नितांत प्रेम सहित उन्हें समझाया और पत्रादि भी लिखे। इस सबका अपेक्षित परिणाम भी हुआ और जोधपुराधीश के जीवन में संयम व सदाचार के विचार बल पाते गए। दूसरी ओर नन्ही के लिए यह स्थिति असह्य हो उठी और प्रतिशोध की ज्वाला से दग्ध यह नारी विरोधी वर्ग से जा मिली।

दूध में विष

और अन्ततः षड्यन्त्रकारियों के गुट को और अधिक बल मिल गया और २५ सितम्बर, १८८३ की रात्रि में महर्षि के निवास स्थान से ६००-७०० रुपये का सामान चोरी हो गया। स्वामी जी की सेवा में रहने वाला सत्यानन्द ब्रह्मचारी भी इन दिनों षड्यन्त्रकारियों ने तोड़ लिया था। इस घटना के चार दिन पश्चात् अर्थात् २९ सितम्बर, १८८३ को महर्षि को दूध में काँच पीस कर पिला दिया गया। इस कुकृत्य का सूत्रधार बना उनका रसोइया जगन्नाथ। दया की साक्षात मूर्ति देव दयानन्द ने इस नराधम को क्षमा मात्र ही नहीं किया अपितु राज्य से बाहर पलायन कर जाने हेतु धन भी प्रदान किया। किन्तु वह तो था निमित्त मात्र। षड्यन्त्र के सूत्रधार तो कुछ बहुत ही बड़े लोग थे।

स्वामी जी जगन्नाथ द्वारा दिया गया दूध पीकर सोए तो रात्रि में ही भयंकर उदरशूल से ग्रस्त हो उठे। वे जागे और उन्होंने तीन बार वमन भी किया। कुल्ले कर कर के देव दयानन्द ने सोने का प्रयास किया। किन्तु वेदना के फलस्वरूप उनकी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आंख न लग पाई। उदर शूलता बढ़ती रही, हृदय में घबराहट भी बढ़ती रही, कंठ सूखता गया और अतिसार के फलस्वरूप दस्तों का क्रम भी आरम्भ हो गया। सर्व प्रथम डा० सूर्यमल ने उन्हें दवाई दी और फिर सहायक सर्जन ने। किन्तु दस्तों की संख्या बढ़ती ही गई और हृदय में घबराहट भी। कहा जाता है कि महर्षि की इच्छा के विपरीत सहायक सर्जन ने उपचार आरम्भ किया।

बताया जाता है कि यह सहायक डा० अली मरदान नन्हींजान का दिवाना था और चाटुकार भी। महर्षि की दुर्बलता बढ़ते-बढ़ते स्थिति अनियन्त्रित होती गई तो स्वामी जी को आबू पर्वत पर भेजने की योजना बनी। २१ अक्तूबर को स्वामी जी को पालकी में आबू पहुँचाया गया। भरे मन से उन्हें विदायी दी महाराज जसवंतसिंह ने।

अन्तिम क्षण

आबू में स्वामी जी की हालत दिन-प्रतिदिन बिगड़ती ही रही तो उन्हें २६ अक्तूबर को अजयमेरु (अजमेर) पहुँचा दिया गया।

कालकूट विष के प्रयोग के कारण जर्जर शरीर। पूर्ण एक मास हो गया मृत्यु से जूझते हुए महर्षि को। अन्ततः देव दयानन्द की नश्वर काया अनन्त वीरत्व में परिणित होकर महान् सत्ता से जा मिली। वह थी कातिक मास की अमावस्या (दीपावली) की सांध्य वेला। ६ बजे का समय (३० अक्तूबर, १८८३)।

देव दयानन्द धरती के घरौंदे का त्याग कर प्रभु की अनन्त सत्ता में विलीन हो गए। पूर्ण प्रभा सहित भारत के गगन पर चमका-दमका महान् नक्षत्र भावी पीढ़ियों का पथ आलोकित कर अपनी कीर्ति कौमुदी से जग-जग में एक अमर सुगंध बिखेर गया। उस दिन आसिन्धु सिन्धु पर्यन्त भारत भूमि में दीपोत्सव के उपलक्ष में जले कोटि-कोटि दीप मानों उनकी अमर दीप्ति के ही प्रतीक बन गए थे।

इतिहासकारों का मत

कतिपय क्षेत्रों में महर्षि को विष दिए जाने के सम्बन्ध में शंका कुशंकाओं का घटाटोप उठाया जाता रहा है। किन्तु महर्षि की जीवनी के लेखकों ने जिनमें श्री हरविलास शारदा, बंगाली विद्वान् श्री देवेन्द्र नाथ मुखोपाध्याय और अमर हुतात्मा पं० लेखराम और स्वामी सत्यानन्द जी उल्लेखनीय हैं, सर्व सम्मति से यही मत व्यक्त किया है कि महर्षि को विष दिया गया था।

इतना ही नहीं अपितु आबू और अजमेर के तत्कालीन हिन्दू, मुस्लिम और ईसाई चिकित्सकों ने भी यही मत व्यक्त किया है कि स्वामी जी को संखिया और पिसा हुआ कांच दूध में दिया गया।

महाराजा सर प्रताप सिंह ने अपनी आत्मकथा में भी यही लिखा है कि स्वामी दयानन्द जी महाराज की मृत्यु का कारण विष ही बना था।

उस समय के समाचारपत्रों में जो समाचार प्रकाशित हुए थे उनके आधार पर मैक्समूलर ने भी अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा था "स्वामी दयानन्द सरीखे महान् वेदज्ञ संत का निधन विष से हुआ।"

राजस्थान के ख्यातिनामा इतिहासकार मुंशी देवीप्रसाद के पौत्र श्री पुरुषो-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

त्तमप्रसाद गौड़ ने भी कहा था कि "ऋषिवर के हत्यारे की मृत्यु १६२२ ई० में हुई। अन्तिम दिनों में उसने अपने कुकर्म को स्वीकार किया।"

श्री हरविलास शारदा तो महर्षि के महाप्रयाण के समय अजमेर में ही थे, उन्होंने भी महर्षि की मृत्यु का कारण उन्हें विष दिया जाना ही माना है। इस प्रकार उपलब्ध विवरणों से यह स्वतः सिद्ध है कि महर्षि का देहांत उन्हें विष दिये जाने का ही परिणाम था और इस कुकृत्य के पीछे अनेक तथाकथित बड़े लोग थे, जो सत्य-ज्ञान के प्रचार और प्रसार से भयभीत थे।

'दान–महिमा'

धन की गतियां:—

दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य।
यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति॥

(धन की तीन गतियां होती हैं। प्रथम दान करना—दूसरी भोग करना और तीसरी नाश को प्राप्त होना। जो मनुष्य ना धन का दान करता है, न भोग करता है तो उसका धन तीसरी गति अर्थात् नाश को प्राप्त होता है॥)

मनुष्य का मित्र दान:—

सार्थः प्रवसतो मित्रं भार्या मित्रं गृहे सतः।
आतुरस्य भिषङ् मित्रं दानं मित्रं मरिष्यतः॥

(दूर देश में रहने वाले का मित्र धन, घर में रहते हुए का मित्र भार्या, रोगी का मित्र औषधि तथा मरने वाले का मित्र दान ही है॥)

दान से शत्रु भी मित्र बन जाते हैं:—

दानेन भूतानि वशीभवन्ति दानेन वैराण्यपि यान्ति नाशम्।
परोऽपि बन्धुत्वमुपेति दानैर्दानं हि सर्वव्यसनानि हंति॥

(दान से सब प्राणी वश में हो जाते हैं। दान से वैर भी समाप्त हो जाते हैं। दान से पराये भी अपने बन जाते हैं तथा दान से सब प्रकार के व्यसन भी नष्ट हो जाते हैं।

दान से ही मनुष्य पूजनीय है:—

दानेन प्राप्यते स्वर्गो दानेन सुखमश्नुते।
इहामुत्र च दानेन पूज्यो भवति मानवः॥

(दान से ही स्वर्ग प्राप्त किया जाता है, दान से ही सुख का भोग किया जाता है। और दान के कारण ही मनुष्य लोक तथा परलोक में पूजनीय होता है।)

—भारत भूषण आर्य

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हृदय रोग: दही एक गुणकारी अवरोधक

आए दिन हृदयरोग से निधन होने की चर्चा पढ़ने और सुनने को मिलती है। कभी आप पढ़ते हैं कि अमुक सज्जन गत रात अच्छे भले सोए थे और प्रातःकाल सूर्योदय के भी बहुत समय बीत जाने के बावजूद भी वह न जागे। किसी परिवार वाले ने द्वार खटखटाया तो कोई उत्तर न आया। अन्ततः भीतर प्रवेश किया तो पाया कि श्री…जी अनन्त निद्रा में मग्न हैं। चिकित्सक आए, जांच पड़ताल की गई तो विदित हुआ कि अचानक ही दिल का दौरा पड़ने से स्वर्ग सिधार गए हैं।

एक और सज्जन अच्छे भले। दिखाई भी पूर्ण स्वस्थ देते थे। चलते-चलते मार्ग में लड़खड़ाए और ऐसे गिरे कि उठ ही न पाए। उन्हें हृदय रोग ही चिर निद्रा में सुला गया।

ऐसी घटनाएं सुनते हैं तो प्रायः परिवारों के बड़े-बूढ़ों को यह कहते हुए भी सुना जाता है कि ''हमने तो भइया कभी इस रोग का नाम ही न सुना था। न जाने कैसे-कैसे रोगों की चर्चा सुनने में आती है।'' और दूसरे ही क्षण उन्हें यह कहते भी सुना जा सकता है ''भइया तुम लोगों की खुराक भी क्या है ले देकर चाय, काफी, कोकाकोला या वनस्पति में तले और बने पदार्थ। न घी, दूध खाते हो न ही दही ही का उपयोग कर पाते हो। इसलिए इस पीढ़ी की रोगों से लड़ने की ताकत भी घट रही है।''

उनकी इस बात में बड़ा ही सार है। प्राचीन काल में आर्य जाति का मुख्य भोजन दूध और दही ही था। वे रूखी-सूखी रोटी मट्ठे (दही का और अधिक तरल रूप) से सवेरे ही खाते थे। दिन भर में १८-१८ घंटे काम करते थे। न कभी थकान ही सताती थी और न ही सुस्ती ही आ पाती थी।

आयुर्वेद में दही के गुणों का वर्णन

आयुर्वेद में दही के गुणों की गरिमा का बखान पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है। उसमें बताया गया है कि जिन लोगों को दूध नहीं पचता वे भी दही बड़ी शीघ्रता से पचा जाते हैं। यह भी उदर के अनेक विकारों के निवारण में भी दही चमत्कारी प्रभाव दिखाती है। यह भी कहा जाता है कि दही आधा पचा हुआ दूध ही है। नमक और काली मिर्च के साथ दही खाने से तो शरीर को पुष्ट और कांतिमान बनाने में सहायता मिलती है।

स्वदेश में तो सुदूर अतीत से ही दही के महत्व की चर्चा सुनी जाती रही है और इसे अमृत कहकर सम्बोधित किया जाता रहा है। अब तक अनेक तथाकथित पढ़े लिखों की दृष्टि में दूध दही महत्वहीन सी ही रही है। किन्तु पिछले कुछ वर्षों के दौरान जो नवीन खोज की गई हैं, उनमें भी दही के गुणों को स्वीकार किया गया है। हृदय रोग में तो दही का प्रभाव नितांत ही गुणकारी बताया जाता है। अनुसन्धानों से यह निष्कर्ष भी निकला है कि जो व्यक्ति हर रोज पाव से आधा किलो तक दही खाएगा वह कभी भी हृदय रोग का शिकार नहीं बन पाएगा।

मशीनी युग; नई स्थिति

आज जीवन में मशीनों के योगदान के कारण एक नए ढंग की तीव्रता प्राप्त

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कर ली है। ज्यों-ज्यों मशीनों के योगदान के फलस्वरूप मानवीय सुख सुविधाओं में विपुल योगदान के बावजूद मनुष्य की चिन्ताओं का तान-वितान भी आए दिन विस्तार पाता जा रहा है। यों तो सभी प्रकार के रोगों में वृद्धि हो रही है। परन्तु हृदय रोग भी मशीनी युग की ही देन हैं। यह रोग किशोर से लेकर वृद्ध तक किसी भी आयु के व्यक्ति को हो सकता है।

हृदय रोग क्या है ?

इस रोग में रक्त के थक्के बनने लग जाते हैं और रक्त का दौरा हृदय की ओर रुक जाता है। इन थक्कों या क्लाट्स के कारण रक्त रुक जाने से हृदय गति भी अवरुद्ध हो जाती है। इसे ही हृदयाघात अथवा दिल के दौरे की संज्ञा दी जाती है। अनेक बार यही दौरा इतना भयंकर रूप ग्रहण कर जाता है कि व्यक्ति का प्राणान्त भी हो जाता है। यदि मृत्यु न भी हो तब भी व्यक्ति का शरीर खोखला होकर रह जाता है। हृदय रोगी हर समय ही मृत्यु की छाया से सहमा सा रहता है।

यदि मानव रक्त में थक्के या क्लाट्स का निर्माण न हो तो दिल का दौरा पड़ने की भी कभी कोई संभावना नहीं रहती। ये थक्के क्या हैं ? कतिपय दोषों के परिणाम स्वरूप रक्त जमकर उसमें थक्के बनने लग जाते हैं। जब थक्कों का निर्माण हो जाता है तो नसों में रक्त का दौरा नहीं हो पाता, क्योंकि मानव की नसें इतनी महीन होती हैं कि उनमें केवल द्रव खून ही प्रवाहित हो सकता है।

दही के सम्बन्ध में कतिपय नये तथ्य

नवीन अनुसंधानों के अनुसार दही में वह शक्ति निहित है कि वह शरीर में रक्त के थक्कों का निर्माण नहीं होने देती। दूध में एक विशेष प्रकार के जीवाणु उत्पन्न हो जाते हैं जो दूध को दही के रूप में परिवर्तित कर देते हैं।

इतने सूक्ष्म होते हैं ये जीवाणु कि इन्हें केवल सूक्ष्मदर्शी यन्त्र से ही देख पाना सम्भव है, नग्न नेत्रों से नहीं। नवीन अनुसंधानों से विदित हुआ है कि दही के ये जीवाणु खून के थक्कों का सृजन नहीं होने देते। अपितु यहाँ तक भी पाया गया है कि खून के थक्के बनने से रोकने में भी अचूक सिद्ध हुए हैं। दूसरे शब्दों में दही को हृदय रोग की अचूक औषध कहा जा सकता है। क्योंकि दही खाने के परिणाम स्वरूप न तो खून के थक्के ही बनेंगे और न ही दिल में खून का दौरा बन्द होगा और न ही दिल का दौरा पड़ेगा।

इन्हीं दिनों में अफ्रीका और इंग्लैंड में इस बारे में अनेक अनुसंधान हुए हैं।

अफ्रीका की एक जनजाति है मसाई। इसमें हृदय रोग नहीं पाया जाता। इस कबीले के व्यक्ति मांसाहारी हैं, फिर भी हृदय रोग से बचे रहते हैं। ऐसा होने के सम्बन्ध में जब खोज की गई तो विदित हुआ कि उनके भोजन में दही को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। भोजन में वे लोग जो कतिपय अन्न पदार्थ खाते हैं, उतनी ही मात्रा में दही का भी उपयोग करते हैं। दही का यह अधिक प्रयोग ही उन्हें हृदय रोग से सुरक्षित रखे हुए है।

तदुपरांत दही पर हुए अनुसंधानों ने यह भी सिद्ध कर दिया है कि दही में अद्भुत और आश्चर्यचकित कर देने वाली शक्ति है। हमें अपने भोजन में थोड़ी-बहुत मात्रा में दही का प्रयोग निश्चित रूप से ही करना चाहिए। ●

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मन तो बहुत करता है। इच्छा होती है कि कुछ ऐसा हो कि संसार के कोने से स्वर गूंजे—

आर्य समाज की जय ! महर्षि दयानन्द की जय !

वैदिक धर्म की जय !!!

इसी भावना से प्रस्तुत है, एक प्रचार पुस्तक

आर्य समाज स्थापना शताब्दी पर

कम से कम

आप इसकी एक-एक हजार प्रतियां मंगा कर

अपने क्षेत्र में फैलाएँ

शताब्दी तक यह एक करोड़

विभिन्न भाषाओं में बंटे

आर्य समाज के १०० वर्ष

१८७५ से १९७५ तक आर्यसमाज ने

राष्ट्र-समाज और संसार को

क्या दिया ?

मूल्य २० पैसे : १५ रु० सैकड़ा

जन – ज्ञान प्रकाशन

१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ऐतिहासिक कहानी

महाराणा की प्रतिज्ञा

—विजय

उदयपुर के महाराणा प्रताप का दरबार ! सामंतगण अपने-अपने आसनों पर आसीन हैं, किन्तु चतुर्दिक् एक निस्तब्धता सी व्याप्त है।

महाराणा ने ही इस खामोशी को तोड़ा। झाला सरदार की ओर दृष्टिपात करते हुए महाराणा बोले झालाराव ! अब और सहन नहीं हो पा रहा। मातृ-भूमि मेवाड़ के वक्षस्थल पर मुगलों का पदाघात तो अब सहनशीलता का बांध तोड़ता ही जा रहा है।

"महाराणा ! हम तो आपकी आज्ञा की प्रतीक्षा में हैं। आदेश दें।"

"हमें उदयपुर त्यागकर कोमलमीर को अपना केन्द्रस्थल बनाना होगा और तदुपरांत शक्ति संचय कर चित्तौड़ की सुधि ली जाएगी।"

"तो क्या फिर उदयपुर को उजाड़ना होगा महाराज !"

"हां झालाराव ! यह मेरे पिताजी के कलंक का स्मारक सा लगता है। मेरा यही आदेश है कि उदयपुर को उजाड़ दिया जाए।" राज दरबार में पुनः निस्तब्धता व्याप्त हो गई।

× × ×

महाराणा का आदेश सभी ने सुना। उन्हें विदित था कि प्रताप को उदयपुर के प्रति आकर्षण नहीं। किन्तु चितौड़ के लिए उनके मन में एक कसमसाहट है।

शक्तिसिंह के छोड़ जाने से भी राणा के हृदय में एक वेदना पल रही थी। किन्तु उनके मन का साहस अविचल था और संकल्प भी सुदृढ़। उन्होंने अकेले भी मुगलों से संघर्ष करते रहने का निश्चय किया हुआ था। इस विपरीत स्थिति में भी उन्हें झाला, चंदावत आदि सरदारों पर पूर्ण भरोसा था।

महाराणा ने पुनः मौन भंग करते हुए निर्देश दिया" यथाशीघ्र हमें यहाँ से प्रस्थान कर देना चाहिए।

"आपकी आज्ञा शिरोधार्य है महाराणा" चन्दावत बोले और कहा "मैं आज ही घोषणा कराए देता हूँ।"

महाराणा ने स्वीकृति प्रदान कर दी। आदेश मिलते ही देश में ढिंढोरा पीट दिया गया। सभी नगरवासियों को राजमहल के समक्ष स्थित प्रांगण में एकत्र होने का निर्देश दिया गया था।

राजमहल का प्रांगण उदयपुर वासियों से खचाखच भरा था। तिल करने को भी कहीं स्थान प्रतीत न हो रहा था। तभी महाराणा प्रताप वहाँ पधारे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"महाराणा की जय" का उद्घोष सहस्रों कण्ठों से गूंज कर दिग् दिगन्त में व्याप्त हो गया।

तभी महाराणा की धीर गम्भीर गर्जना हुई—"नगरवासिय! एक नितांत आवश्यक कार्यवश मैंने आप लोगों को यहां एकत्र किया है। मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मेरा ध्येय है चित्तोड़ का उद्धार। मेरा यह अविचल संकल्प है कि मेरा मस्तक अकबर के समक्ष कदापि न झुकेगा। यदि सारा संसार भी अकबर को अपना सम्राट् स्वीकार कर ले तब भी मैं स्वतन्त्रता की पताका लिए एकाकी खड़ा रहूँगा। मेरी दृष्टि में उदयपुर एक त्याज्य नगरी है। युद्ध के लिए सर्वथा अनुपयोगी। मैंने कोमल मीर को एक सुदृढ़ दुर्ग का रूप देने की योजना बनाई है। वहाँ शत्रु की शक्ति को अवरुद्ध करने में प्रकृति हमारी सहायक बनेगी। जो भी मेरा साथ देना चाहें वे मेरी योजना को स्वीकार करें।"

सहस्रों कण्ठों से पुनः समवेत स्वर गूंजा "महाराणा हम सब आपकी आज्ञा का पालन करेंगे।"

प्रताप के मुखमण्डल पर एक गर्वमय मुस्कान प्रतिबिम्बित हुई और वे बोले "आप सबके सहयोग से ही मातृभूमि मवाड़ का गौरव अक्षुण्ण रहेगा। मैं सार्वजनिक रूप से यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि जब तक चित्तौड़ स्वतन्त्र न होगा मातृभूमि बन्धन मुक्त नहीं हो जाएगी, जब तक चित्तौड़ पर पुनः परम पवित्र भगवा ध्वज न फहराएगा तब तक वन खण्ड ही मेरा निवास स्थल होंगे और तृण शैय्या पर शयन का व्रत निभाऊंगा और सोने चांदी के बर्तनों में भोजन नहीं करूंगा।"

इस प्रतिज्ञा के उच्चारण के साथ ही साथ सहस्रों तलवारें म्यान से बाहर निकल पड़ीं। शत शत कण्ठों से स्वर गूंज उठा, महाराणा आपकी प्रतिज्ञा ही हमारी प्रतिज्ञा है और आपका संकल्प ही हमारा संकल्प।

धरा धाम में एक भूकम्प सा आ गया। ऐसा लगा कि मानों सहस्रों सिंह एक साथ गर्जना कर उठे हों। नर नाहर राजपूतों के मुख मण्डल दमक उठे, तो सैकड़ों तलवारें भी चमक उठीं और रणशूरों के भुजदण्ड फड़क उठे।

जनता जनार्दन का अभिवादन स्वीकार कर महाराणा अन्तः कक्ष में लौट गए। राजसी वस्त्रों को उतार कर उन्होंने सामान्य जन सरीखे ही परिधान धारण कर लिए। गम्भीर मुद्रा में पूर्वजों के चलचित्र के समक्ष झुककर आशीर्वाद मांगा और फिर चित्तौड़ की ओर अभिमुख हुए तथा उनके मुख से यह स्वर गूंज उठे "मातृभूमि तेरी स्वतन्त्रता के लिए इस दास का जीवन समर्पित हो, यही वर दे।"

× × ×

महाराणा अन्तःपुर में पहुँचे तो उन्हें सामान्य वेशभूषा में देखकर दासियों में उद्विग्नता सी व्याप्त हो उठी। महाराणा को देखते ही महारानी ने उनके चरणों को स्पर्श करते हुए कहा "नाथ! सुना है आपने उदयपुर को त्याग देने का निर्णय कर लिया है।"

हां महारानी! यह सर्वथा सत्य है। इसके साथ ही मैंने यह संकल्प भी ग्रहण किया है कि जब तक चित्तौड़ पर स्वतन्त्रता की पताका नहीं फहराएगी तब तक हम न राजसी वेश धारण करेंगे न सोने चांदी के बर्तनों में भोजन और न ही पर्यंक पर शयन। अपितु तृण ही हमारी शैय्या होंगे और जनखंड ही निवास स्थल।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महारनी ने भी एक एक कर सभी आभूषण उतार दिए और अपने कक्ष में पहुँचकर राजसी वस्त्रों को भी त्याग कर साधारण कपड़े पहन लिए।

महाराणा ने जब राणी को इस वेश में देखा तो अन्तर्वेदना फूट पड़ी और इतना ही कह सके "यह क्या किया तुमने महारानी !" किन्तु क्षत्राणी के देदीप्यमान मुखड़े पर विषाद का कोई चिह्न तक न था। उन्होंने कहा "प्राणनाथ ! आपका संकल्प ही तो मेरा संकल्प है।"

महाराणी के इस वाक्य ने महाराणा को नवप्रेरणा प्रदान कर दी। वे बोले तुम तैयार रहो, मैं अभी आता हूँ।

× × ×

प्रताप अपने कक्ष में एकाकी बैठे थे। गम्भीर चिन्ता में डूबे। उनके मानस पटल पर अनेक विचार आते और बिजली से कौंध कर रह जाते। अकबर की विशाल शक्ति की उन्होंने कल्पना की तो एक बार मन कुछ सिहरा। किन्तु दूसरे ही क्षण योगेश्वर श्रीकृष्ण का यह अमर उपदेश उन्हें स्मरण हो आया "कर्मण्याधिकारेषु मा फलेषु कदाचन" और मन सर्वथा चिन्तामुक्त हो गया। मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लक्ष्य के समक्ष मन की समस्त चिन्ताएं और संताप लुप्त हो गए।

एक एक कर अपने वीर पूर्वजों के चित्र उनके मानस पटल पर उभरने लगे। उन्हें प्रतीत हुआ कि वाप्पा रावल, महाराणा साँगा, चित्तौड़ की गौरव, पद्मिनि का जौहर और सहस्रों क्षत्राणियों की राख उन्हें ललकार रही है और चित्तौड़ दुर्ग का कण कण अपने ऊपर फहराते हुए मुगल ध्वज के कारण आर्त्तनाद कर रहा है और उससे एक ही गूंज उठ रही है कौन है वह सपूत जो दिलाएगा दासता की शृंखला से मुझे मुक्ति।"

महाराणा अपने आप ही गरज उठे "मातृभूमि चित्तौड़ ! प्रताप तुम्हें बन्धन मुक्त कराएगा। वर दो जननी ! आशीर्वाद दो जन्मभूमि !"

गत गौरव को प्रत्येक मूल्य पर पुनः प्राप्त करने के लिए उनका हृदय नवोत्साह से भर उठा और वे बाहर आए तथा कूच का निर्देश दे दिया।

कुछ ही क्षण बीते कि उदयपुर के विभिन्न भागों से सैकड़ों लोगों के समूह अश्वों, गजों और ऊंटों पर अपना सामान लादे चल पड़े। लग रहा था कि एक प्रबल तूफान उमड़ पड़ा है।

सन्नद्ध सेना ने भी कोमलगीर की अ.र प्रस्थान कर दिया। आगे आगे चल बढा महाराणा प्रताप।

धीरे धीरे पैदल, अश्वों और हाथियों के पदचापों से उठती धूल उदयपुर पर छाने लगी। लग रहा था कि उदयपुर अस्तपुर बन रहा है। शनैः शनैः धूल इतनी बढ़ गई कि उदयपुर का राजमहल और सभी वास मानों उसमें अट गए। लगा कि - उदयपुर का अस्तित्व ही नहीं रहा। और हाँ उदयपुर अस्तित्वहीन तो हो ही रहा था, क्योंकि उसके गौरव, उसके रक्षक, उसके निवासी सभी तो उसे छोड़ चले थे।

भगवी पताका उदयपुर का उपहास करती हुई आकाश में उड़ रही थी और सहस्रों चरण बढ़ रहे थे लक्ष्य की ओर !

—:०:—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बहो, पछुआ बयार

—राबर्ट पेन वारेन

मैं जानता हूं, मैं जानता हूं,
यद्यपि साक्षी खो गई है।
और वह अन्तिम व्यक्ति भी
दम तोड़ गए हैं, जो कुछ बता सकते थे।
वहो पछुआ बयार,
और हाँ वह साक्षी, अरे
वह तो खो गई है।
और वहां उप पक्षी को भी अस्थिर कर रही हैं।
और हाँ मैं जानता हूं कि
वाज अभी ऊपर क्यों फड़फड़ा रहा है।
सूर्यास्त के समय,
प्राची दिशा रक्ताभ हो उठती है।
और हाँ ! वह पक्षी भी
अस्थिर हो उठता है।
और मैं जानता हूं
मेरे पिता के मुख पर कितना शीतल था पसीना।
जब उन्होंने चिर विदाई ली थी।
बहो पछुआ हवा बहो।
पक्षी को भी अस्थिर बनाओ
मैं जानता हूं एक बार,
जब मैं बालक था।
अपने चारों हाथ पाँव के बल,
एक निर्झरणी को ताक रहा था।
मैंने देखा था धूप में
मेरे हाथ से जल बिन्दु झरे थे।
और वे थीं द्युतिमान
किन्तु तुम तो किसी बात पर
विश्वास न करोगे,
क्योंकि साक्षी कोई नहीं है।

—०::०—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एक जानवर ऐसा भइया !

भइया माधव !

हां भाई राघव !

क्या तुमने कभी अद्‌भुत जीव जन्तुओं के दर्शन किए हैं ? जीव जन्तु भी ऐसे कि जो हों तो दो पाए किन्तु चौपायों को भी नाकों चने चबा दें, वक्त पड़े तो उन्हें भी अपनी जन्मदायिनी का दूध याद दिलादें।

हाँ भाई माधव ! कुछ कुछ अनुभव तो किया है। ऐसे कुछ के दर्शनार्थ थोड़ा बहुत समय भी दिया है।

"तो फिर मैं कुछ प्रश्न करूं तो बताओगे ?"

"हाँ भाई समझ में आ गया तो तुरन्त ही उत्तर पाओगे।"

"तो फिर बताओ, अपनी बुद्धि का चमत्कार दिखाओ।"

"अच्छा तो पूछिए श्रीमान् ! हमने लगा लिए हैं अपने कान।"

तो बताओ वह कौन सा पशु है कि जिसके मानव जैसी आँख, गेंद जैसा पेट और चपटी सी नाक है। रात जिसे प्यारी है और दिन जिसके लिए लाचारी है। जिसे दे जाए दिखाई वह समझे की आपका भाई। जिसके छोटे हैं कान, किन्तु सुनने में है शैतान। बताना मेरे भाई। देखूं कहाँ तक तुम्हारी बुद्धि है पहुँच पाई। बताओ उसका नाम पाओ दो पान का इनाम।

सुना राघव भाई। ये जो विशेषताएं आपने बताईं। वे जाती हैं, जिसमें पाईं। उसका नाम है उलूक। जो है भाग्य पर बन्दूक।

हो तो तुम चतुर। अक्ल पर नहीं है, तत्काल उत्तर खोज निकाला। इसके लिए बधाई, तुमने बुद्धिमत्ता दिखायी। किन्तु अभी परीक्षा है बाकी। हम कुछ और भी पूछेंगे तभी तुम्हें इनाम देंगे।

पूछो न भाई। हम भी हैं तैयार। दिमाग पर नहीं है ताला। देंगे हम जवाब और सुनेंगे जनाब।

तो देना अब उत्तर। सुनो होकर सत्वर। मैं कहता हूँ वरदान। तुम देना उस पर ध्यान। कभी कुत्ते सा गुर्राये, कभी बकरी सा मिमयाए, कभी खूब दुलत्ती झाड़े, कभी हाथी सा चिंघाड़े। कभी लोमड़ी सा बने चालाक, तो कभी गीदड़ लगे साफ। जब भी देखे वह अपना शिकार, करे बिल्ली जैसा वार। साँप सी केंचुली धारे। कभी उसको उतारे। कभी बन्दर सी उछल कूद। अन्धेरे में देर तक सोए। गिरगिट से बदले जो रंग, जिसके अजब निराले ढंग। जहां देखे कुछ पाएगा, जोंक सा चिपट जाएगा। स्वयं को गऊ सा सीधा दिखाए, पर गर्दन बैल सी हिलाए। खटमल सा पिए खून और रीछ सी हो चाल। खींचे अपना बनकर खाल। बने पहले जो अपना, फिर देखे अन्धा सपना। दो को जो वह मिलता पाए तो आग फूट की धध-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

काए, बढ़ाए लम्बे बाल, चले बगलों जैसी चाल। पग में पहने कभी खड़ाऊं, हाथ में मुद्रिका जड़ाऊं। देखे जो तवा परांत। गंवादे वहां सारी रात। कभी भक्तों सा हो वेश कभी बना फिरे दरवेश। कभी देता हो उपदेश। कभी कागज चार उठाए फिर उनमें वाक्य बढ़ाए। जाने न जो भाषा। उसका भी करे खुलासा। जहां हो प्राप्ति की आशा, वहाँ दुम कुत्ते सी हिलाए। किन्तु जब काम बन जाए, तो फिर बाघ सा गुर्राए।''

बस भाई बस। हो गया बहुत अधिक गुणगान। अब ये सुन न सकेंगे। इतने में ही बता दूं, आपका आशय मैं समझा दूं। अब और न विशेषण लगाओ। थोड़ा ठहर भी तो जाओ। इतने में ही बतला दूं। लो उसका नाम बता दूं।''

'माधव सुनो तो पूरा सवाल। फिर ही उत्तर देना सम्हाल।'

जरूरत नहीं भाई। जितनी विशेषताएं बताई। उन्हीं से हो गया है, साफ ये कौन सा जानवर है सुनें आप।

तो अच्छा बताओ। अपनी बुद्धिमत्ता जताओ।''

सुनिएगा श्रीमान्। लगा ध्यान से कान। जिसमें इतने जीवधारियों की आदत का हो संगम। उसे हो न किसी का गम। वह टसुए भी बहाए। कभी रोकर भी दिखाए। उसे समझ लें आप वह तो है 'नेता' साफ। अभिनेता भी कह लें, चाहें आचार्य कहें, चुप रह लें।''

कमाल है भाई। शक्ल से तो लगते हो, बुद्धू पर हो तुम बुद्धिराम। तुमने खूब है बताया। सफा ही अनुमान लगाया।''

''अरे मेरे भाई। यह तो था क्या बड़ा सवाल। इसमें है कौन सा कमाल। कोई बड़ा पूछो प्रश्न। ताकि बुद्धि पर लगे जोर। हिले कुछ तो दिमागी डोर। या फिर ऐसा हो वह सवाल, जिसको निकालने का प्रयास करते करते निकल आए दिन और बीत जाए रात। फिर तो होगी कोई बात।''

नहीं भाई नहीं। हम गए हैं थक। आज इतने पर ही बस। फिर कभी पूछेंगे। आपकी परीक्षा लेंगे। अब तो लो यह आप इनाम। रखा पूरा जोड़ा पान। ये जो पान का है बीड़ा, इसको उठाइए और मुख में दबाइए। आप गए जीत। अब छेड़िए संगीत। थोड़ी मिटे दिमागी थकान। आप भी रखें ध्यान। फिर कल भी आइएगा। थोड़ा समय लगाइएगा।

अच्छा तो मैंने ले लिया है पान। आप से लेते हैं विदा। अलविदा, अलविदा।

—दिग्दर्शनानन्द

समाजवादियों की भूल

समाजवादियों की भूल यह है कि वे भ्रातृत्व के ऊपर साम्य को प्रतिष्ठत न कर साम्य के ऊपर भ्रातृत्व को प्रतिष्ठित करने की चेष्टा करते हैं। साम्यहीन भ्रातृत्व सम्भव है, पर भ्रातृहीन साम्य नहीं टिक सकता; मतभेद, कलह और अधिकार की उद्दाम लालसा से वह विनष्ट हो जाएगा। सबसे पहले पूर्ण भ्रातृत्व होगा, फिर उसके बाद पूर्ण साम्य।

—श्री अरविन्द

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बोधकथा

तीन मस्तिष्क एक हृदय और एक कसौटी

विद्या केन्द्र काशी से क्रमशः काव्य, न्याय और व्याकरण में निष्णात होकर तीन पंडित एक नगर में आकर पास-पास बस गए। अपने-अपने विषयों का अध्ययन अध्यापन करते हुए उन लोगों ने बड़ा सम्मान और ख्याति अर्जित की। पड़ौस में सामने ही एक सद्‌ग्रहस्थ का आनवास भी था जो भगवदार्चन में लीन रहते हुए विद्योपार्जन द्वारा संतोष पूर्वक अपना काल यापन करते थे।

एक दिन एक भिक्षुक ने आकर पहले काव्यतीर्थ के द्वार पर विनती करते हुए कहा, "मैं भूखा हूँ। भोजन मिले ! दाता का भगवान भला करेंगें।"

ऊपर गवाक्ष से काव्यतीर्थ महाशय सिर निकालकर नीचे झाँकते हुए बोले, "अरे मूर्ख ! इधर-उधर क्यों भटकता फिरता है। काव्य के रसाम्बुधि में गोता लगा जिसमें समस्त ताप नाश होते हैं। कलामय काव्य के रसास्वादन से तेरा भूख प्यास का क्लेश मिट जाएगा।"

भिखारी ने उत्तर में निवेदन किया, "भैया, इस आदेश का क्या प्रभाव होगा ? आंतों के कुल-कुलाने पर भजन-भाव कुछ सूझता नहीं।"

"काव्य ब्रह्मानन्द सहोदर है। इसके सान्निध्य से जिस दिव्य आनन्द की अनुभूति होती है उसके आगे क्षुधा-तृषा आदि नगण्य सन्ताप टिक ही नहीं सकते। अतएव अमृतमय काव्य की तू शरण ले जिसका पीयूष तेरी समस्त व्यथा को हर लेगा।" मुस्कराते हुए काव्य तीर्थ ने अपने परामर्श को दोहराया।

क्षुधार्त्त भिक्षुक मन ही मन खीझता हुआ वहाँ से चलकर व्याकरणतीर्थ के आवास पर पहुँचा और उसने वहां अपनी फरियाद दोहराई।

व्याकरण सूत्रों की पुनरावृत्ति में संलग्न व्याकरणतीर्थ महोदय ने अपना पाठ रोक कर उत्तर दिया, "अरे नासमझ ! तू कितना अनभिज्ञ है ? शब्दा हि कामध्ये:

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

की सूक्ति से सर्वथा अपरिचित होने से यदि तू पीड़ा पाता है तो इसमें सचमुच कोई आश्चर्य नहीं ! तू मेरी सलाह मानकर शब्द-शास्त्र का अध्ययन कर, जिससे निश्चय ही तेरी सभी क्षुधाओं का निवारण होगा। शब्दों में अंतर्निहित शक्ति तेरी सब ऐहिक-दैविक आवश्यकताओं की असंदिग्धत: पूर्ति करेगी !"

भिखारी ने लाख कहा कि कोरे शब्दों से उसकी भूख मिटने की नहीं, परन्तु व्याकरणतीर्थ के कानों पर जूँ नहीं रेंगी।

अपने भाग्य को कोसता हुआ वह भिखारी तीसरे घर के द्वार पर दर्द भरे स्वर में गिड़गिड़ाने लगा। उसके सामने तो भूख की समस्या थी जो अपने विकराल रूप में उसे संत्रस्त कर रही थी। वह पीड़ा मिश्रित स्वर में गिड़गिड़ाने लगा, "मालिक, कुछ मिल जाये। भगवान भला करेंगे ! बाल-बच्चे अच्छे रहें। गरीब पर दया करो, एक जून का भोजन मिले, भगवान बरक्कत देंगे।" मकान था न्याय-तीर्थ का और वह अपने दरवाजे पर बैठे प्रत्यक्ष और प्रच्छन्न अनुयाय की अनुसंगिकता की गुत्थियाँ सुलझा रहे थे। तर्क-सम्मत वाणी में उन्होंने उस भिखारी से प्रश्नों की झड़ी लगा दी। पहला सीधा प्रश्न हुआ—"क्या प्रमाण है कि तू भूखा है ?"

भिक्षुक ने सिर झुकाकर पेट की ओर इंगित करते हुए कहा, "देखिए हुजूर, भूख के मारे पेट पिचक कर पीठ से लग गया है।"

न्यायतीर्थ ने झटके से बात काटी, "अरे यह तो कोई प्रमाण नहीं हुआ। बहुतों के पीठ की बनावट ही ऐसी होती है।"

भिखारी गिड़गिड़ाते हुए बोला, "साहब, [सच कहता हूँ। भूख से परेशान हूँ। भगवान जानते हैं कई दिनों से अन्न का दाना भी मुँह में नहीं गया है।"

"शपथ प्रमाण नहीं। भगवान कोई साक्षी देने थोड़े ही आएंगे। भूखे होने का अकाट्य प्रमाण मिलना चाहिये। हो सकता है अजीर्ण के कारण पिछले दिनों तूने भोजन न किया हो। ऐसा करना तेरे स्वास्थ्य के हित में ही रहा होगा। मैं तो विश्वास तभी कर सकूँगा जब तू भूखे होने का प्रत्यक्ष प्रमाण दे।" न्यायतीर्थ ने दो टूक शब्दों में अपना दृढ़ मन्तव्य प्रकट किया।

निराश भिक्षु डबडबाए नेत्रों से आगे बढ़ कर वहाँ से अन्यत्र जाने का उपक्रम कर ही रहा था कि पड़ौसी सद्‌ग्रहस्थ ने उसे प्रेम पूर्वक बुलाकर भोजन कराया। संतृप्त भिखारी आशीर्वाद देता हुआ अपनी राह लगा।

कुछ समय पश्चात उस सद्‌ग्रहस्थ ने उन तीनों विद्वान् परन्तु हृदयहीन पड़ौसियों को अपने यहाँ भोजन करने के लिए आमंत्रित किया। उनके आगे उसने अपने-अपने विषय के प्रख्यात ग्रन्थ थाली में सजाकर रख दिए। विस्मित हो तीनों ने कहा, "मित्र, इन पुस्तकों का थाली से क्या प्रयोजन ?"

उसने तपाक से उत्तर दिया, "बन्धुओ, कवि की क्षुधा काव्य शास्त्र से, न्यायिक की भूख न्याय-ग्रन्थों से और वैयाकरण की तृप्ति पाणिनी-पांतजलि के सद्‌ग्रन्थ से होनी ही चाहिए। इन ग्रन्थों में प्रतिपादित विषय सामग्री रस, प्रमाण और शब्दानन्द की स्वयं सिद्धि है और आप ऐसे गुणीजन इनसे अपनी भूख यदि नहीं मिटा सकेंगे तो क्या एक निरक्षर और अन्यथा भिक्षुक अपनी संतृप्ति पावेगा ?"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सुन्दर फरनीचर का प्रगतिशील नाम

डिलाईट

वर्षों के अनुभव और कार्यकुशलता के कारण आज डिलाईट की अलमारियां और फरनीचर सारे भारत में प्रसिद्ध हैं क्योंकि यह देखने में सुन्दर, मजबूत, टिकाऊ और पक्के रंगों में उपलब्ध हैं। दुकान हो या घर, विवाह हो या कोई शुभ अवसर, यह सब की शोभा बढ़ाता है।

आप भी आज डिलाईट फरनीचर खरीद कर अपने घर, आफि । व दुकान की शोभा बढ़ावें और आनन्द पावें।

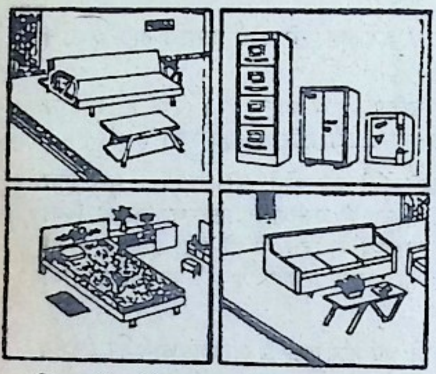

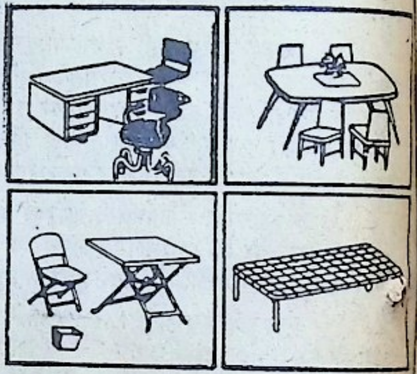

डिलाईट सेफ वर्क्स

कतुब रोड, दिल्ली-६ फोन 511380

विक्रेता

१. काटेज स्टोर, २० विनय नगर मार्कीट, नई दिल्ली।
२. काश्मीर क्राकरी हाऊस, लक्कड़ बाजार, लुधियाना।
३. मित्तल ब्रादर्स, मिरकी बाजार, भटिण्डा। ४. निहालचन्द गोपालदास अबोहर।
५. महेन्द्रा ब्रादर्स, कोर्ट रोड, मोगा।
६. जैम सेल्स कार्पोरेशन, सेक्टर ७-सी दु० नं० ३० मध्य मार्ग, चण्डीगढ।
७. हरयाणा आयरन एण्ड स्टील इण्डस्ट्रीज, बाजार हिसारिया, सिरसा।
८. लीला इलैक्ट्रिक कं० ७० कोतवाली रोड, श्री गंगानगर (राज०)।
९. राणा इण्डस्ट्रीज, लाडपुरा बाजार, कोटा (राज०)
१०. आदर्श इलैक्टिक एण्ड जनरल सप्लायर्ज, नैका आोली, नीमच (म० प्र०)।
११. ओवरसीज ट्रेड एजेन्सीज, केसर गंज, अजमेर।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद-भाष्य का मूल्य ३१ अक्टूबर से १५१) होगया है।

जन-ज्ञान के जो सदस्य अभी तक भी वेद-भाष्य के सदस्य नहीं बने हैं उनके लिए विशेष रियायत : वे १२४) भेजकर वेद भाष्य के सदस्य बन सकते हैं। जन-ज्ञान के प्रत्येक परिवार में वेद भाष्य होना ही चाहिए। —सम्पादक

क्या आप अपने परिवार में प्रभु की अमर वाणी वेद नहीं लाएंगे ?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी हरिद्वार की
औषधियां सेवन कर

गुरुकुल कासारि

खांसी की अपूर्व गुणकारी औषधि

उपयोग—किसी भी कारण से हुई खांसी, नजला, जुकाम आदि में लाभदायक है।

सेवन विधि—दिन में तीन बार छोटी चम्मच लेकर उंगली से चाटें।

आंखों के अनेक रोगों के लिए

संसार प्रसिद्ध

भीमसेनी सुरमा

च्यवनप्राश

उत्तम स्वादिष्ट रसायन

शरीर को बलिष्ठ एवं कान्तिमय बनाता है

शारीरिक क्षीणता एवं फेफड़ों के लिये प्रसिद्ध

आयुर्वेद रसायन

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी

पो० गुरुकुल कांगड़ी [सहारनपुर]

शाखा कार्यालय—चावड़ी बाजार, दिल्ली-६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जीवन को सफलता के
चार स्तम्भ
चार फल

अर्ध शताब्दी पूर्व आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध विचारक तथा शास्त्रार्थ महारथी श्री गणपति आर्योपदेशक ने इस लघु ग्रन्थ की रचना एवं प्रकाशन किया था। पं० गणपति की कीर्ति कौमुदी से समग्र भारत भूमि प्रकाशित हो उठी थी। कश्मीर की केसर क्यारियों से लेकर राजस्थान की मरुधरा एवं इन्द्रप्रस्थ से लेकर वेदों की पावनऋचाओं से गुंजित सिन्धु धारा और गंगा यमुना की उर्वरा भूमि उत्तर प्रदेश एवं चाणक्य तथा चन्द्रगुप्त की लीलास्थली विहार तक उन्होंने महर्षि प्रदत्त वैदिक विचारधारा को जन-जन तक पहुंचा कर उनकी प्रगाढ़ निद्रा को तोड़ने का अहर्निश प्रयास किया।

प्रस्तुत पुस्तक अब एक दुर्लभ ग्रन्थ है। इसमें पं० गणपति ने महर्षि दयानन्द द्वारा प्रस्तुत मानव जीवन के उद्देश्य को स्पष्ट किया है। यह संक्षिप्त पुस्तक एक महान् मनीषी की अनुपम देन है। लेखक के शब्दों में ही इसके प्रकाशन का उद्देश्य है मानव को अपने जीवन के उद्देश्य का ज्ञान कराना।

—संपादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ओ३म्

॥ सच्चिदानन्देश्वराय नमो नमः ॥

चार फल

प्रथम भाग

भूमिका

महर्षि दयानन्द ने मनुष्यजाति पर जो अनेक उपकार किये हैं उनमें से एक महान् उपकार यह है कि उन्होंने मनुष्य जाति के सन्मुख मनुष्य जीवन का वास्तविक उद्देश्य रक्खा है। वेदादि सत्यशास्त्र, सब ऋषि मुनि इस विषय में सहमत हैं कि मनुष्य-जीवन का उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार पदार्थों की प्राप्ति करना ही है। ये ही 'चार फल' हैं जो मनुष्य शरीररूपी वृक्ष में लगने से यह शरीर सफल होता है अन्यथा निष्फल चला जाता है। इसलिये सब मनुष्यों को इन चार पदार्थों की प्राप्ति के लिये सदा प्रयत्नशील होना चाहिये, यदि मनुष्य इन पदार्थों की प्राप्ति के लिये उद्योग न करेगा तो उसे अधर्म, अनर्थ, द्वेष तथा बन्ध ये चार पदार्थ अवश्य ही प्राप्त होकर दुःखदायी होंगे। इस लिये इन चार पदार्थों का परित्याग करके धर्मादि पदार्थों का ग्रहण करना अत्यन्त आवश्यक है। इस पुस्तक के प्रकाशित करने का उद्देश्य भी यही है कि सब मनुष्यों को अपने जीवन के उद्देश्य का ज्ञान हो जावे जिससे सब उसकी प्राप्ति के लिये उद्योग कर सकें। इस पुस्तक के प्रथम प्रकरण में महर्षि दयानन्द प्रणीत सत्यार्थप्रकाश तथा अन्य ग्रन्थों से चतुर्वर्ग-बोधक कुछ प्रकरणों का संग्रह सर्वसाधारण आर्य जनता के लिये किया गया है। दूसरे प्रकरण में महर्षि कृत ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका तथा वेदभाष्य के कुछ प्रकरणों का संग्रह है। वेदभाष्य का भावार्थ आर्य भाषा में दिया गया है। तीसरे प्रकरण में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के लक्षणादि तथा अन्य आर्षग्रन्थों तथा वैदिक विद्वानों के कुछ लेख हैं।

यद्यपि इस पुस्तक का दूसरा भाग मुख्यतया आर्य विद्वानों तथा पंडितों के लाभार्थ तथा विचारार्थ प्रकाशित किया गया है तथापि दोनों भागों से सर्वसाधारण आर्य जनता तथा विद्वज्जन लाभ उठा सकते हैं।

इस पुस्तक के संपादन तथा लेखन में जो त्रुटियां तथा भूलें हो गई हों उन की सूचना स्वाध्यायशील आर्य जनता तथा आर्य पंडित देने का अनुग्रह करें, क्योंकि यह मेरा प्रथम प्रयत्न है।

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः॥

अन्त में मैं उस महर्षि को पुनः पुनः धन्यवाद देता हुआ सच्चिदानन्दस्वरूप परम-पिता परमात्मा से अत्यन्त विनयपूर्वक प्रार्थना करता हूँ कि हे करुणानिधे परमात्मन्! सब मनुष्यों की आत्माओं में सत्य का ऐसा प्रकाश कीजिये जिससे वे इन चार फलों के स्वरूप को यथावत् जानकर प्राप्त करने को समर्थ हो सकें।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभाग् भवेत्॥

सब का शुभ चिन्तक—गणपति आर्योपदेशक, दिल्ली

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चार फल

प्रथम भाग

प्रथम प्रकरण

सत्यार्थप्रकाश में

चार फल

१. जो मनुष्य इस ब्रह्मचर्य को प्राप्त होकर लोप नहीं करते वे सब प्रकार के रोगों से रहित होकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त होते हैं। पृष्ठ-४२

२. विद्वानों का यही काम है कि सत्यासत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण असत्य का त्याग करके परम आनन्दित होते हैं। वे ही गुणग्राहक पुरुष विद्वान् होकर धर्म, अर्थ काम और मोक्ष रूप फलों को प्राप्त होकर प्रसन्न रहते हैं। पृष्ठ-२८६

३. उपदेश्योपदेष्ट्टत्वात् तत्सिद्धिः। सांख्य ३-७९

इतरथान्धपरंपरा। सांख्य ३-८१

अर्थात् जब उत्तम-उत्तम उपदेशक होते हैं तब अच्छे प्रकार धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सिद्ध होते हैं। और जब उत्तम उपदेशक और श्रोता नहीं रहते तब अन्ध-परम्परा चलती है। फिर भी जब सत्पुरुष उत्पन्न होकर सत्योपदेश करते हैं, तभी अन्धपरम्परा नष्ट होकर प्रकाश की परम्परा चलती है। पृष्ठ-२९६

४. मूर्तिपूजा करते-करते ज्ञानी तो कोई न हुआ प्रत्युत सब मूर्तिपूजक अज्ञानी रहकर मनुष्य जन्म व्यर्थ खोके बहुत-बहुत से मर गये और जो अब हैं वा होंगे वे भी मनुष्यजन्म के धर्म, अर्थ काम और मोक्ष की प्राप्तिरूप फलों से विमुख होकर निरर्थ नष्ट हो जायेंगे। पृष्ठ-३३०

५. भला अब लों जो हुआ सो हुआ परन्तु अब तो अपनी मिथ्या प्रपंचादि बुराइयों को छोड़ो और सुन्दर ईश्वरोक्त वेदविहित सुपथ में आकर अपने मनुष्यरूपी जन्म को सफल कर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इस चतुष्टय फल को प्राप्त होकर आनन्द भोगो।

६. जिस-जिस साधन से वह श्रोता धर्मार्थ काम, मोक्ष और परमात्मा को जान सके, वैसी शिक्षा किया करे। पृष्ठ-४०५

७. जो पुरुष विद्वान्, ज्ञानी, धार्मिक, सत्पुरुषों का संगी, योगी, पुरुषार्थी, जितेन्द्रिय, सुशील होता है वही धर्मार्थ काम मोक्ष को प्राप्त होकर इस जन्म और परजन्म में सदा आनन्द में रहता है। पृष्ठ-४१३

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

८. अग्निहोत्रादि यज्ञों से वायु, वृष्टि, जल, की शुद्धि द्वारा आरोग्यता का होना उससे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि होती है उसको भुला वेद, ईश्वर और वेदोक्त धर्म की निन्दा करना धूर्तों का काम है।
पृष्ठ-४२३

९. सर्वशक्तिमान् परमात्मा की कृपा सहाय और आप्तजनों की सहानुभूति से "यह सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावे" जिससे सब लोग सहज से धर्मार्थ काम मोक्ष की सिद्धि करके सदा उन्नत और आनन्दित होते रहें, यही मेरा मुख्य प्रयोजन है।
पृष्ठ-६३०

संस्कारविधि में

चार फल

१. जिस करके शरीर और आत्मा सुसंस्कृत होने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त होसकते हैं और सन्तान अत्यन्त योग्य होते हैं। इसलिये संस्कारों का करना सब मनुष्यों को अति उचित है।
पृष्ठ-२

२. सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर आप मुझ और सब पढ़ने-पढ़ाने हारे तथा सब संसार पर अपनी कृपादृष्टि से सबको सभ्य, विद्वान्, शरीर और आत्मा के बल से युक्त और परोपकारादि शुभ कर्मों की सिद्धि करने कराने में चिरायु स्वस्थ, पुरुषार्थी, उत्साही करे कि जिससे इस परमात्मा की सृष्टि में उसके गुण, कर्म, स्वभाव के अनुकूल अपने गुण, कर्म, स्वभावों को करके धर्मार्थ काम और मोक्ष की सिद्धि कर-करा के सदा आनन्द में रहें।
पृष्ठ-११७

३. हे परमेश्वर दयानिधे ! आपकी कृपा से जपोपासनादि कर्मों को करके हम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि को शीघ्र प्राप्त होवें। पृष्ठ-१९६

४ जिस परमात्मा का यह 'ओ३म्' नाम है उसकी कृपा और अपने धर्मयुक्त पुरुषार्थ से हमारे शरीर, मन और आत्मा का त्रिविध दुःख जो कि अपने दूसरे से होता है नष्ट हो जावे और हम लोग प्रीति से एक दूसरे के साथ वर्त्त के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि में सफल हो के सदैव स्वयं आनन्द में रहकर सबको आनन्द में रक्खें।
पृष्ठ-२२८

आर्याभिविनय में

चार फल

१. हे परमैश्वर्यवन् भगवन् ! धर्मार्थकाममोक्षादि तथा विज्ञानादि दान से अत्यन्त मुझको बढ़ा।
पृष्ठ ७२ स्थूलाक्षर पृष्ठ-१८३ सूक्ष्माक्षर

२. सब पुरुषार्थ यही है कि परमात्मा, उस की आज्ञा और उसके रचे जगत् का यथार्थ से निश्चय [ज्ञान] करना, उसी से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार फलों की सिद्धि होती है। अन्यथा नहीं। इस हेतु से तन, मन, धन, और आत्मा इनसे प्रयत्नपूर्वक ईश्वर के साहाय्य से सब मनुष्यों को धर्मादि पदार्थों की यथावत् सिद्धि अवश्य करनी चाहिये। पृष्ठ-१२१-१२२, स्थूलाक्षर पृष्ठ-३०२ सूक्ष्माक्षर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पञ्चमहायज्ञविधि में

चार फल

१. इन नित्यकर्मों के फल ये हैं कि ज्ञान प्राप्ति से आत्मा की उन्नति और आरोग्यता होने से शरीर के सुख से व्यवहार और परमार्थ कार्यों की सिद्धि होना उस से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये सिद्ध होते हैं। इनको प्राप्त होकर मनुष्यों को सुखी होना उचित है।

पृष्ठ-१

२. ईश्वर सर्वशक्तिमान्, दयालु, न्यायकारी, चेतन, व्यापक, अन्तर्यामी, सबका उत्पादक, धारण करने हारा, मंगलमय, शुद्ध, सनातन, ज्ञान और आनन्द-स्वरूप है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष पदार्थों का देने वाला, सबका पिता, माता, बंधु, मित्र, राजा और न्यायाधीश इत्यादि ईश्वर के गुण विचारपूर्वक उपासना करने का नाम सगुणोपासना है।

पृष्ठ-१६

३. सब लोगों को चाहिये कि सत्, चित्, आनन्द स्वरूप, नित्यज्ञानी, नित्य-मुक्त, अजन्मा, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, व्यापक, कृपालु, सब जगत् के जनक और धारण करने हारे परमेश्वर ही की सदा उपासना करें कि जिससे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जो मनुष्यदेहरूप वृक्ष के चार फल हैं वे उसकी भक्ति और कृपा से सर्वथा सब मनुष्यों को प्राप्त हों।

पृष्ठ-३८

४. हे ईश्वर दयानिधे! आपकी कृपा से जो-जो उत्तम काम हम लोग करते हैं वे सब आपके अर्पण हैं जिससे हम लोग आपको प्राप्त होके धर्म जो सत्य न्याय का आचरण करना है, अर्थ जो धर्म से पदार्थों की प्राप्ति करना है, काम जो धर्म और अर्थ से इष्ट भोगों का सेवन करना है और मोक्ष जो सब दुःखों से छूटकर सदा आनन्द में रहना है। इन चार पदार्थों की सिद्धि हमको शीघ्र प्राप्त हो।

पृष्ठ-४०

व्यवहारभानु में

चार फल

१. क्या मनुष्य अच्छी शिक्षा से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष फलों को सिद्ध नहीं कर सकता? पृ० १

२. किसी का सामर्थ्य नहीं है कि जो अविद्वान् होकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के स्वरूप को यथावत् जानकर सिद्ध कर सके॥ पृ० ११

३. इसके होने से जहां रहोगे वहां सुखी और प्रतिष्ठा पाओगे, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के सम्बन्धी कर्मों को जानकर सिद्ध कर सकोगे। पृ० १७

४. सब मनुष्यों को अत्यन्त उचित है कि सर्वथा झूठ छोड़कर सत्य ही से सब व्य-वहार करें, जिससे धर्म, अर्थ काम और मोक्ष को प्राप्त होकर सदा आनन्द में रहें॥ पृ० ३०

५. प्रश्न—राजा किसको कहते हैं?

उत्तर—जो विद्या, न्याय, जितेन्द्रियता, शौर्य, धैर्य आदि गुणों से युक्त होकर अपने पुत्र के समान प्रजा के पालन में श्रेष्ठों की यथायोग्य रक्षा और दुष्टों

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

को दण्ड देकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति से युक्त होकर अपनी प्रजा को कराकर आनन्दित रहता और सबको सुख से युक्त करता है वह राजा कहाता है ।। पृ० ३४

गोकरुणानिधि में

चार फल

प्रमत्त—कहो जी मांस छूटा सो छूटा, मद्य पीने में तो कोई भी दोष नहीं ?

शान्त—मद्य पीने में भी वैसे ही दोष हैं जैसे कि मांस खाने में, मनुष्य मद्य पीने से नशे के कारण नष्टबुद्धि होकर अकर्त्तव्य कर लेता और कर्त्तव्य को छोड़ देता है, न्याय का अन्याय और अन्याय का न्याय आदि विपरीत कर्म करता है और मद्य की उत्पत्ति विकृत पदार्थों से होती है और वह मांसाहारी अवश्य हो जाता है इसलिये इसके पीने से आत्मा में विकार उत्पन्न होते हैं और जो मद्य पीता है वह विद्यादि शुभ गुणों से रहित होकर उन दोषों में फंसकर अपने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष फलों को छोड़ पशुवत् आहार, निद्रा, भय, मैथुन आदि कर्मों में प्रवृत्त होकर अपने मनुष्य जन्म को व्यर्थ कर देता है इसलिये नशा अर्थात् मदकारक द्रव्यों का सेवन कभी न करना चाहिये । जैसा मद्य है वैसे भांग आदि पदार्थ भी मादक हैं इसलिये इनका भी सेवन कभी न करे, क्योंकि ये भी मादक हैं इसलिये इनका भी सेवन कभी न करे, क्योंकि ये भी बुद्धि का नाश करके प्रमाद, आलस्य और हिंसा आदि में मनुष्य को लगा देते हैं इसलिये मद्यपान के समान इनका भी सर्वथा निषेध ही है ।

पृ० ११-१२

सत्यधर्म विचार में

चार फल

१. (ईश्वर ने) धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि के लिये जीवों के नेत्रादि साधन भी रचे हैं ।। पृ० १२

२. पक्षपात से ही नित्य अधर्म होता है । अधर्म से काम को सिद्ध करना इसी को अनर्थ कहते हैं और धर्म और अर्थ से कामना अर्थात् अपने सुख की सिद्धि करना इसको काम कहते हैं, और अधर्म अर्थात् अनर्थ से काम को सिद्ध करना इसको कुकर्म कहते हैं इसलिये इन तीनों अर्थात् धर्म, अर्थ और काम से मोक्ष को सिद्ध करना उचित है । इसमें यह बात है कि ईश्वर की आज्ञा का पालन करना इसको धर्म और उसकी आज्ञा को तोड़ना इसको अधर्म कहते है सो धर्मादि ही मुक्ति के साधन हैं और कोई नहीं और मुक्ति सत्य पुरुषार्थ से सिद्ध होती है अन्यथा नहीं ।। पृ० १८-१९

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महर्षि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन प्रथम भाग में

चार फल

१. परमात्मा से सदा यही प्रार्थना करता हूँ कि आप महाशय पुरुषों की बुद्धि को परोपकार के करने में निरन्तर नियुक्त किया करे, जिससे पुनः यह आर्यावर्त्त देश अपनी पूर्व दशा को सम्प्राप्त होकर अपने मनुष्य रूपी वृक्ष में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी चतुष्टय फलों से संयुक्त होकर परमानन्द भोगे ।। पृ० १४

२.

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु ।
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम् ।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा ।
न्यायपात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ।

इसका अभिप्राय यह है कि संसार में चाहे कोई निन्दा करे वा स्तुति, लक्ष्मी अर्थात् धनादि पदार्थों की प्राप्ति हो चाहे अप्राप्ति, और मरना चाहे इसी समय ही वा कालान्तर में परन्तु वीर पुरुष ऐसी २ विपत पर भी धर्मरूपी मार्ग नहीं छोड़ते । इसका फल यह है कि जो पुरुष ऐसा दृढ़ निश्चय युक्त धर्मपथ पर स्थिर रहता है उसके लिये धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों की प्राप्ति होती है । पृ० १७

द्वितीय भाग में

चार फल

३. जब वेदों का सत्य अर्थ सबको विदित होगा तब मनुष्य लोग असत्य व्यवहार को छोड़ के सत्य का ग्रहण और सत्य में ही प्रवृत्त होंगे इसके होने से मनुष्यों को सुख प्राप्ति अवश्य होगी तथा वेद का सत्य अर्थरूप जो राज्य और परमेश्वर का यथावत् प्रकाशरूप जो अखण्ड राज्य है सो भी इस भाष्य के होने से जगत् में यथावत् प्रकाशित होगा इस निमित्त से भी यह वेदभाष्य परमोत्तम होता है और जब इस वेदभाष्य को यथावत् विचार के उसके कहे प्रमाण से जो मनुष्य आचरण करेंगे उनको सत्य धर्म सत्य अर्थ सत्य काम और नित्य सुखरूप जो मोक्ष इन चारों पदार्थों की सिद्धि प्राप्त होगी इसमें कुछ सन्देह नहीं ।।

यह प्रथम प्रकरण समाप्त हुआ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

द्वितीय प्रकरण

ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में

चार फल

धर्म, अर्थ काम और मोक्ष इन चारों पदार्थों की प्राप्ति के लिये इन चार आश्रमों का सेवन करना सब मनुष्यों के लिये उचित है ॥ पृ० २५०

ऋग्वेदभाष्य में

चार फल

१. हे मनुष्यो ! अनन्त सत्यविद्या युक्त अनादि सर्वज्ञ परमेश्वर ने तुम लोगों के हित के लिये जिन अपने विद्यामय अनादिरूप वेदों को प्रकाशित किये हैं उनको पढ़-पढ़ा और धर्मात्मा विद्वान् होकर धर्म, अर्थ, काम मोक्ष फलों को सिद्ध करो ॥ १। ७२। १

२. जो मनुष्य अच्छी शिक्षा से युक्त अच्छे प्रकार परीक्षित शुभ लक्षणयुक्त सम्पूर्ण विद्याओं का वेत्ता दृढ़ांग अतिबली पढ़ानेहारा श्रेष्ठ सहाय से सहित पुरुषार्थी धार्मिक विद्वान् है । वही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त होके प्रजा के दुःख का निवारण कर पराविद्या को सुन के प्राप्त होता है, इससे विरुद्ध मनुष्य नहीं ॥ १। ८६। ५

३. मनुष्यों को चाहिये कि विद्या और पुरुषार्थ से विद्वानों के संग औषधियों के सेवन और पथ्य से जो २ प्रशंसित कर्म प्रशंसित गुण और श्रेष्ठ पदार्थ प्राप्त होते हैं उनका धारण और उनकी रक्षा तथा धर्म, अर्थ काम की सिद्धि कर मोक्ष की सिद्धि करें ॥ १। ६१। १८

४. हे मनुष्यो ! तुम जिस गुरु परमेश्वर ने वेद के द्वारा सर्व पदार्थों का विशेष ज्ञान कराया है उसका आश्रय करके यथायोग्य व्यवहारों का अनुष्ठान कर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि के लिये बहुत काल पर्यन्त जीवन की रक्षा करो ॥ १। ६६। ८

५. जो देखने योग्य परिमाण वाला पदार्थ है वह परमात्मा होने को योग्य नहीं । न कोई भी उस अव्यक्त सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर के बिना समस्त जगत् को उत्पन्न कर सकता है और न कोई सर्वव्यापक सच्चिदानन्दस्वरूप अनन्त अन्तर्यामी चराचर जगत् के आत्मा परमेश्वर के विना संसार के धारण करने जीवों के पाप और पुण्यों का साक्षीपन और उनके अनुसार जीवों को सुख दुःखरूप फल देने के योग्य है न इस परमेश्वर की उपासना के विना धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के पाने को कोई जीव समर्थ होता है । इससे यही परमेश्वर उपासना करने योग्य इष्टदेव सबको मानना चाहिये ॥ १। ११५। १

६. मनुष्यों को चाहिये कि पाप से दूर रह धर्म का आचरण और जगदीश्वर की उपासना कर शान्ति के साथ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की परिपूर्ण सिद्धि करें ॥ १। १५२। १

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

७. मनुष्यों को सदैव स्थूल छिद्र रहित वस्त्र पहिन कर जाननेयोग्य दोष रहित वस्त्रादि पदार्थ निर्माण करने चाहियें और सदैव धारण किये हुए सत्याचरण से असत्याचरणों को छोड़ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष अच्छे प्रकार सिद्ध करने चाहियें ॥ १।१५२।१

८. विज्ञान चाहने वाले जनों को शिष्ट महात्मा जनों से पाई हुई बुद्धि को प्राप्त करके बहु प्रकार के पदार्थ विज्ञान से मनुष्य जन्म के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी फलों को प्राप्त होना चाहिये ॥ २।२।६

९. जो अग्नि के सदृश तेजस्वी विज्ञानदाता विद्वान् लोग धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के साधनों का उपदेश दें, उनकी नित्य नमस्कारपूर्वक सेवा करनी चाहिये ॥ ३।१७।४

१०. मनुष्यों को चाहिए कि निष्फल क्रियाओं को कभी न करें। जिस २ क्रिया से धर्म, अर्थ काम और मोक्ष की सिद्धि हो उस २ को प्रयत्न से करें ॥ ३।४१।३

११. जो मनुष्य सबके साक्षी पिता के सदृश वर्तमान न्यायेश, दयालु शुद्ध सनातन सबके आत्माओं के साक्षी परमात्मा की ही स्तुति और प्रार्थना करके उपासना करते हैं उनको कृपा का समुद्र सबसे श्रेष्ठ परमेश्वर, दुष्ट आचरण से पृथक् करके श्रेष्ठ आचरण में प्रवृत्त कराकर पवित्र तथा पुरुषार्थ युक्त करके धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त कराता है ॥ ३।६२।१०

१२. हे मनुष्यो ! परमेश्वर आप लोगों के प्रति चार प्रकार के पुरुषार्थ को सिद्धिकारी ऐसा कहता है कि जो परस्पर मित्र होकर कार्य की सिद्धि के लिये प्रयत्न करो तो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि आपको विना संशय प्राप्त होवे ॥ ४।३५।३

१३. मनुष्य लोग यथार्थवक्ता विद्वानों के संग से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि करने वाले यज्ञ का विस्तार करें ॥ ५।१३।३

१४. इस संसार में जो मनुष्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के मार्गों को जानें वे ही अन्यों को भी उपदेश देवें न कि इतर अज्ञ जन ॥ ६।१६।३

१५. जैसे अग्नि यथावत् सम्प्रयोग किया हुआ सब कार्य को सिद्ध करता है वैसे ही सत्कार कर स्वीकार किये वेद के विद्वान् लोग धर्मार्थ काम मोक्ष पदार्थों को सब को प्राप्त कराते हैं ॥ ७।७।५

यजुर्वेदभाष्य में

चार फल

१. स्त्री और पुरुष विवाह से पहिले परस्पर एक दूसरे की परीक्षा करके अपने समान गुण कर्म स्वभाव रूप बल आरोग्य पुरुषार्थ और विद्यायुक्त होकर स्वयम्वर विधि से विवाह करके ऐसा यत्न करें कि जिससे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि को प्राप्त हों जिसके माता और पिता विद्वान् न हों उनके संतान भी उत्तम नहीं हो सकते इससे अच्छी शिक्षा और पूर्ण विद्या को ग्रहण करके ही गृहाश्रम का आरम्भ करें इसके पूर्व नहीं ॥ ८।९

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

२. जैसे संसार में सूर्य की किरण सब जगह फैलकर प्रकाश करती है वैसे राजा प्रजा और सभासद् जन शुभ गुण कर्म और स्वभावों में प्रकाशमान हों क्योंकि ऐसा है कि मनुष्य शरीर पाकर उत्साह पुरुषार्थ सत्पुरुषों का संग और योगाभ्यास का आचरण करते हुए मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि तथा शरीर आत्मा और समाज की उन्नति करना दुर्लभ नहीं है, इससे सब मनुष्यों को चाहिए कि आलस्य को छोड़ के नित्य प्रयत्न किया करें।

८ । ४०

३. जैसे सूर्य की किरणों को प्राप्त होकर संसार के पदार्थ शुद्ध होते हैं वैसे ही दुराचारी पुरुष अच्छी शिक्षा और दण्ड को पाकर पवित्र होते हैं। गृहस्थों को चाहिये कि अत्यन्त दुःख देने और कुल को भ्रष्ट करने वाले व्यभिचार कर्म से सदा दूर रहें क्योंकि इससे शरीर और आत्मा के बल का नाश होने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का अनुष्ठान करने को कोई भी समर्थ नहीं हो सकता ॥

१२ । ७६

४. मनुष्यों को चाहिए कि सबसे पहिले औषधियों का सेवन, पथ्य का आचरण और नियमपूर्वक व्यवहार करके शरीर को रोगरहित करें। क्योंकि इसके विना धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का अनुष्ठान करने को कोई भी समर्थ नहीं हो सकता। १२ । ७६

५. मनुष्यों को ऐसा विचारना चाहिये कि हमारे शरीर अनित्य और स्थिति चलायमान है इससे शरीर को रोगों से बचाकर धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष का अनुष्ठान शीघ्र करके अनित्य साधनों से नित्य मोक्ष के सुख को प्राप्त होवें। जैसे औषधि और तृण आदि फल फूल पत्ते स्कन्ध और शाखा आदि में शोभित होते हैं वैसे ही रोगरहित शरीरों से शोभायान हों ॥ १२ . ७९

६. जो राजा प्रजा के सम्बन्धी मनुष्य बुद्धि, बल, आरोग्य और आयु बढ़ाने हारे औषधियों के रसों को सदा सेवन करते और प्रमादकारी पदार्थों का सेवन नहीं करते वे इस जन्म और परजन्म में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सिद्ध करने वाले होते हैं ॥ १९ । ७

७. हे मनुष्यो ! जो एक ही सब जगत् को महाराजाधिराज समस्त जगत् का उत्पन्न करनेहारा सकल ऐश्वर्ययुक्त महात्मा न्यायाधीश है उसी की उपासना से तुम सब धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के फलों को पाकर सन्तुष्ट होओ ॥ २३ । ३

८. हम लोग इस बात को यथार्थ प्रकार से नहीं जानते कि वह ईश्वर किस युक्ति से हमको प्रेरणा करता है कि जिसके सहाय से ही हम लोग धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सिद्ध करने को समर्थ हो सकते हैं ॥ ३६ । ४

९. हे मनुष्यो ! जो अनन्त शक्तियुक्त अजन्मा निरन्तर सदामुक्त न्यायकारी निर्मल सर्वज्ञ सबका साक्षी नियन्ता अनादि स्वरूप ब्रह्म कल्प के आरम्भ में जीवों को अपने कहे वेदों से शब्द अर्थ और उनके सम्बन्ध को जानने वाली विद्या का उपदेश न करे तो कोई विद्वान् न होवे और न धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के फलों को भोगने को समर्थ हो इसलिये इसी ब्रह्म की सदैव उपासना करो ॥ ४० । ८

१०. जो सत्यभाव से परमेश्वर की उपासना करते यथाशक्ति उसकी आज्ञा का

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पालन करते और सर्वोपरि सत्कार के योग्य परमात्मा को मानते हैं। उनको दयालु ईश्वर पापाचरण मार्ग से पृथक् कर धर्मयुक्त मार्ग में चला के विज्ञान देकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सिद्ध करने के लिये समर्थ करता है इस से एक अद्वितीय ईश्वर को छोड़ किसी की उपासना कदापि न करें॥ ४०। १६

तृतीय प्रकरण

धर्म और अधर्म का लक्षण

१. जो पक्षपात रहित न्याय सत्य का ग्रहण असत्य का सर्वथा परित्याग रूप आचरण है उसी का नाम धर्म और इससे विपरीत जो पक्षपात सहित अन्यायाचरण सत्य का त्याग और असत्य का ग्रहण रूप कर्म है उसी को अधर्म कहते हैं। सत्यार्थप्रकाश पृ० ५१

२. जो पक्षपात रहित न्यायाचरण सत्यभाषणादियुक्त ईश्वराज्ञा वेदों से अविरुद्ध है उसको धर्म और जो पक्षपात सहित अन्यायाचरण मिथ्याभाषणादि ईश्वराज्ञा भंग वेदविरुद्ध है उसको अधर्म मानता हूँ। सत्या० प्र० पृ० ६२५

३. जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा का यथावत् पालन और पक्षपातरहित न्याय सर्वहित करना है जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सुपरीक्षित और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के लिये यही एक मानना योग्य है उसको धर्म कहते हैं। आर्योद्दे०

४. जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा को छोड़कर और पक्षपातसहित अन्यायी होके विना परीक्षा करके अपना ही हित करना है जो अविद्या हठ अभिमान क्रूरतादि दोषयुक्त होने के कारण वेदविद्या से विरुद्ध है और सब मनुष्यों को छोड़ने के योग्य है वह अधर्म कहाता है। —आर्योद्देश्यरत्नमाला

मनुष्य मात्र के लिये
धर्म और अधर्म का एकत्व

१. धर्म तो पक्षपातरहित न्यायाचरण, सत्य का ग्रहण, असत्य का परित्याग, वेदोक्त ईश्वर की आज्ञा का पालन, परोपकार, सत्यभाषणादि लक्षण सब आश्रमियों का अर्थात् सब मनुष्य मात्र का एक ही है। —सत्या० प्र० पृ० १३१

२. धर्म और अधर्म एक ही हैं अनेक नहीं यही हम विशेष कहते हैं।

—सत्या० प्र० ४०३

३. सब मनुष्यों के लिये धर्म और अधर्म एक ही हैं दो नहीं जो कोई इसमें भेद करे तो उसको अज्ञानी और मिथ्यावादी ही समझना चाहिये।

—ऋ० भा० भूमि० पृ० ११५

अर्थ और अनर्थ का लक्षण

अर्थ वह है जो धर्म ही से प्राप्त किया जाये और जो अधर्म से सिद्ध होता है उसको अनर्थ कहते हैं। —सत्या० प्र० पृ० ११५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

काम का लक्षण

काम वह है जो धर्म और अर्थ से प्राप्त किया जाय।

सत्या० प्र० पृ० ६२६

कुकाम का लक्षण

कुकाम वह है कि जो अधर्म और अनर्थ से प्राप्त किया जाये।

मोक्ष (मुक्ति) का लक्षण

१. 'मुक्ति' अर्थात् सर्वदुःखों से छूटकर बन्धरहित सर्वव्यापक ईश्वर और उसकी सृष्टि में स्वेच्छा से विचरना, नियत समय पर्यन्त मुक्ति के आनन्द को भोग के पुनः संसार में आना।

—सत्या० प्र० पृ० ६२६

२. मुक्ति अर्थात् जिससे सब बुरे काम और जन्म मरणादि दुःखसागर से छूटकर सुखरूप परमेश्वर को प्राप्त होके सुख ही में रहना है वह मुक्ति कहाती है।

—आर्योद्देश्यरत्नमाला पृ० ६२६

मुक्ति के साधन

१. 'मुक्ति के साधन' ईश्वरोपासना अर्थात् योगाभ्यास, धर्मानुष्ठान, ब्रह्मचर्य से विद्याप्राप्ति, आप्त विद्वानों का संग, सत्यविद्या, सुविचार और पुरुषार्थ आदि हैं।

—सत्या० प्र० पृ० ६२६

२. जो पूर्वोक्त ईश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना का करना, धर्म का आचरण और पुण्य का करना, सत्संग विश्वास तीर्थसेवन (देखो तीर्थ का लक्षण) सत्पुरुषों का संग और परोपकारादि सब अच्छे कामों का करना तथा सब दुष्ट कर्मों से अलग रहना है। ये सब मुक्ति के साधन कहाते हैं।

—आर्योद्देश्यरत्नमाला पृ० ६

बन्ध का कारण और लक्षण

'बन्ध' सनिमित्तक अर्थात् अविद्या निमित्त से है। जो २ पापकर्म ईश्वर भिन्नोपासना अज्ञानादि सब दुःख फल करने वाले हैं इसीलिये यह 'बन्ध' है कि जिसकी इच्छा नहीं और भोगना पड़ता है।

—सत्या० प्र० पृ० ६२६

चरकसंहिता में

चार फल

धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्॥
रोगास्तस्यापहर्तारः श्रेयसो जीवितस्य च॥

—सूत्रस्थान प्रथमाध्याय

अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इनका उत्तम कारण आरोग्यता ही है अर्थात् आरोग्यता रहने पर ही धर्मादि चार प्रकार के पुरुषार्थ की प्राप्ति हो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

...कती है किन्तु रोग इस आरोग्यता का नाश करने वाले हैं। आरोग्यता न रहने पर जीवन और कल्याण भी नष्ट ही हो जाता है।

...ु: मृति में

चार फल

१. वशे कृत्वेन्द्रियग्रामं संयम्य च मनस्तथा।
सर्वान् संसाधयेदर्थानक्षिण्वन् योगतस्तनुम्॥

२।१००

पदार्थ—(इन्द्रियग्रामम्) इन्द्रिय समूह को (वशे कृत्वा) वशीभूत (तथा मनः संयम्य) तथा मन को दमन करके (योगतः) युक्ति से (तनुम् अक्षिण्वन्) शरीर को पीड़ा न देता हुआ पुरुष (सर्वान अर्थान्) सम्पूर्ण अर्थों = पुरुषार्थ चतुष्टय को सिद्ध करे।

भाष्य—बुद्धिमान् पुरुष इन्द्रियों के समूह तथा मन को स्वाधीन करके शरीर को दुःख न देता हुआ, धर्म, अर्थ तथा मोक्षरूप मनुष्य जन्म के फल चतुष्टय को प्राप्त करे।

२. यः स्वाध्यायमधीतेऽब्दं विधिना नियतः शुचिः।
तस्य नित्यं क्षरत्येष पयो दधि घृतं मधु॥

२।१०७

पदार्थ—(यः अब्दम्) जो पुरुष एक वर्ष पर्यन्त (नियतः) नियम में स्थिर होकर (विधिना, शुचि) विधिपूर्वक पवित्र होकर (स्वाध्यायं अधीते) स्वाध्याय करता है (तस्य एषः) उसके लिये यह स्वाध्याय (नित्यम्) निरन्तर (पयः, दधि, घृतम्, मधु) दूध, दही, घी, शहद (क्षरति) वर्षाता है।

मनुष्य जन्म की सफलता

भाष्य—जो पुरुष एक वर्ष पर्यन्त नियम से पवित्र होकर विधिपूर्वक वेद का स्वाध्याय तथा गायत्री का जप करता है उसको दूध, दही, घी, शहद ये चार पदार्थ प्राप्त होते हैं अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूप मनुष्यजन्म के फलचतुष्टय प्राप्त होते हैं। यहाँ दूध आदि फलचतुष्टय के उपलक्षण हैं।

प्राण की रक्षा करना मनुष्य का पहला कर्त्तव्य है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों की प्राप्ति होना मनुष्यजन्म की सफलता है, और यह बात अवश्य ही प्राण पर अवलम्बित है। यदि शरीर की आरोग्यता अच्छी न हो तो इनमें से किसी की भी प्राप्ति न होगी। इसी लिए आत्म-रक्षण मनुष्य का पहला कर्त्तव्य है, कर्म है। प्रत्येक मनुष्य को शरीर की आरोग्यता रखने के लिये तद्विषयक ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

—स्वामी नित्यानन्द जी का व्याख्यान

जीवात्मा के साथ फलचतुष्टय का सम्बन्ध

जीवात्मा के साथ धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्षरूप फलचतुष्टय का प्रापक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और प्राप्यभाव सम्बन्ध है अर्थात् जीवात्मा इन धर्मादि चार फलों का प्रा-वाला और ये धर्मादि प्राप्त होने योग्य मनुष्य जन्म के 'चार फल' हैं।

वेदादि सत्यशास्त्रों के साथ फलचतुष्टय का सम्बन्ध

वेदादि सत्यशास्त्रों के साथ धर्मादि फलचतुष्टय का प्रतिपादक प्रतिपाद्यभाव सम्बन्ध है अर्थात् वेदादि सत्यशास्त्र इन धर्मादि चार पदार्थों का प्रतिपादन करते हैं। इन चार फलों की प्राप्ति द्वारा मनुष्यमात्र का कल्याण करने के लिये ही परमपिता परमात्मा ने चतुष्पदी=वेदवाणी का दान मनुष्य मात्र के लिये सृष्टि के आरम्भ में किया है। इन धर्मादि की प्राप्ति के लिये ही ऋषि मुनियों ने धर्मशास्त्र, अर्थशा[illegible] कामशास्त्र तथा मोक्षशास्त्रों की रचना की है। इसलिये सब मनुष्यों को इन[illegible] प्राप्ति के लिये सदा प्रयत्नशील होना चाहिये।

यह तृतीय प्रकरण समाप्त हुआ।

ओ३म् शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

॥ इति ॥

(प्रथमे भागः समाप्तः)

प्रत्येक आर्य अपने परिवार

में वेद भाष्य लाकर

परमात्मा का आशीर्वाद

प्राप्त करें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन ज्ञा

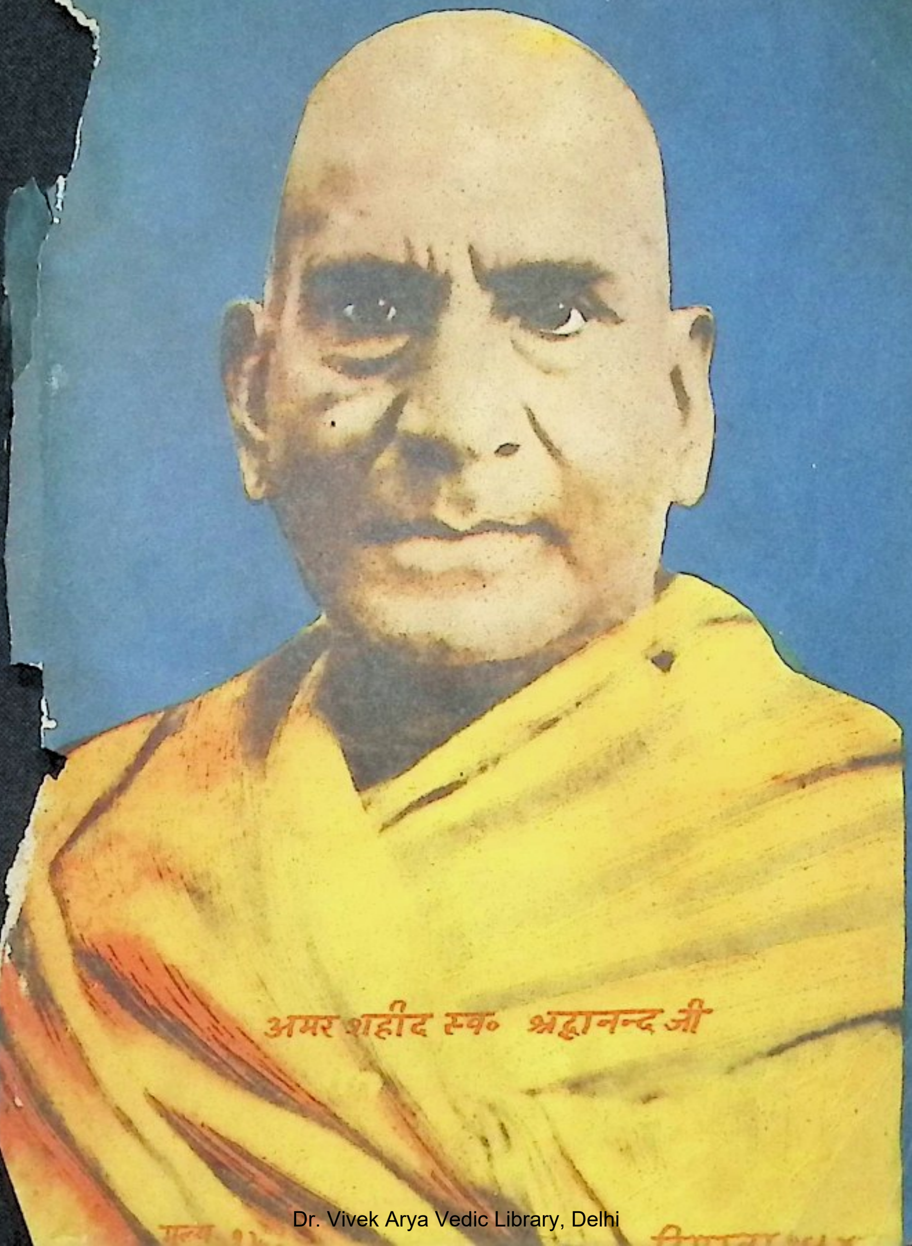

अमर शहीद स्व० श्रद्धानन्द जी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

...स्तान (मासिक)
१२६७ हरध्यानसिंह मार्ग,
नई दिल्ली-५

नम्बर : २१७६३

...नं०
डी०-(सी०)५०१
R.N.-107119/65

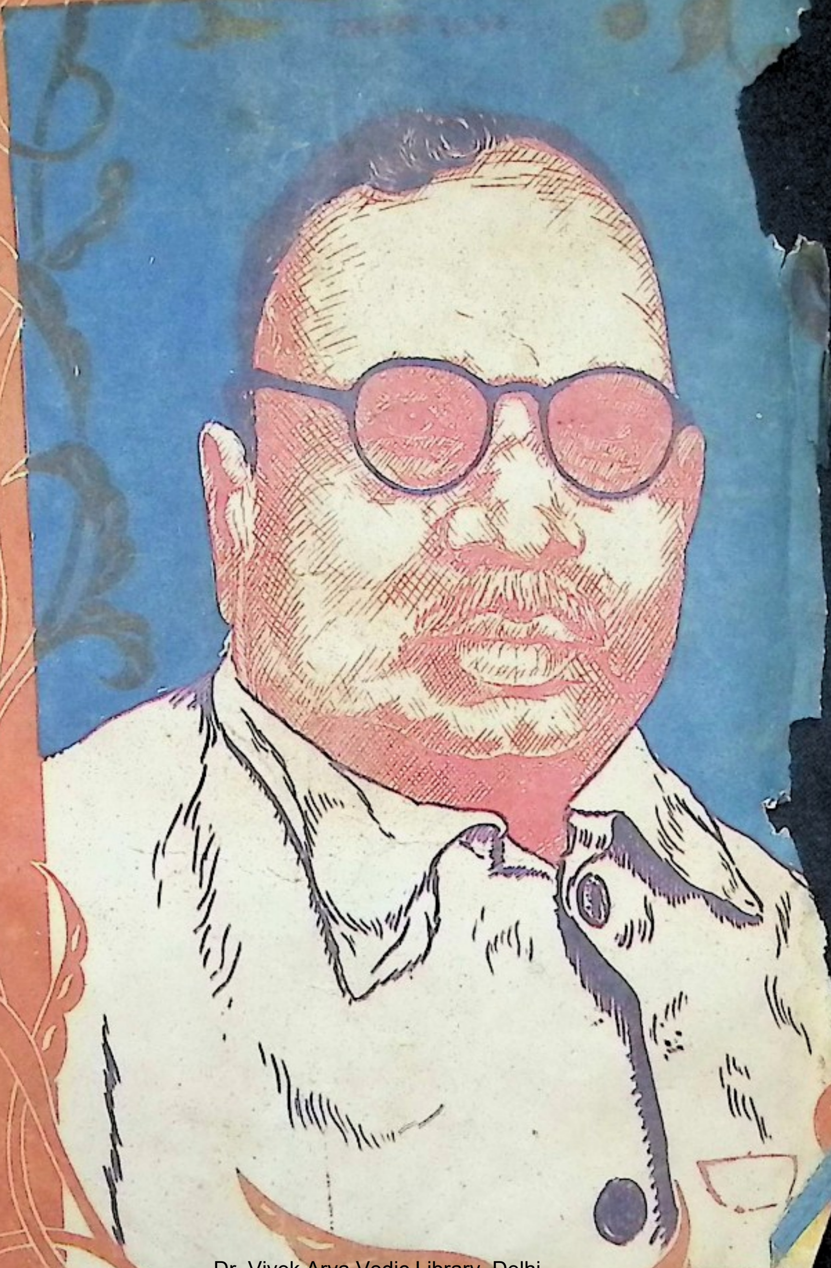

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi